RNI क्र. 50309/85 डाक पंजियन क्र. म. प्र./ 261/ भोपाल 2015-17 प्रकाशन तिथि: 24 फरवरी 2015

चाँद चला है नाव चलाने

देख कुहासे के नद को
रोक सका न अपने मन को
कई सितारे भी आ धमके
बोले, चलना थोड़ा थम के
रात को दो कुछ और थिराने
चाँद चला है नाव चलाने

– मनोज कुमार झा

बाल विज्ञान पत्रिका फरवरी 2015

चकमक

मूल्य ₹ 30

कसली कसली पीठ

- शिवगोविन्द त्रिपाठी

कसली कसली पीठ कि घोड़ा टप टप टप टप टप
हिलती डुलती पूँछ कि झाड़ू झप झप झप झप
खाता दाना घास कि बोले हिन हिन हिन हिन
मेहनत उसका काम कि करता हर दिन हर दिन
काठी कसी लगाम ऐड़ दी हुर्रम हुर्रम
नौसिखिया असवार कि मन में थर्रम थर्रम
बैठे सीना तान कि चाबुक चप चप चप चप
सरपट घोड़ा चला गिरे हम

धप!
धप!
धप!
धप!

चित्र - शैफाली
डिज़ाइन - कनक

बाल विज्ञान पत्रिका
चकमक
अंक 341 फरवरी 2015

इस अंक में

2 कसली कसली पीठ/शिवगोविन्द त्रिपाठी
4 बोली रंगोली
6 छतरी/मंज़ूर एहतेशाम
10 रेडियो का भेड़िया/प्रभात
12 एक पाठ के लिए एक शहर की खोज/रश्मि पालीवाल
18 दोस्ती/शशि
19 अजीब सज़ा/सुकुमार राय
20 मगरमच्छ और शेर की लड़ाई.../जसबीर भुल्लर
23 एक बूँद तोड़ी.../विदुषी यादव
24 बोली रंगोली
26, 39 मेरा पन्ना
27 दो गतिविधियाँ/विवेक मेहता
28 लाल गुलाब और हरी पत्तियाँ/रमा चारी
31 गज्जू का बाड़ा और मणिवाला साँप/अनिल सिंह
36 दो तस्वीरों की दास्तां/विवेक मेहता
40 प्रवासी पक्षियों की यात्राएँ/जितेन्द्र भाटिया
43 चित्रपहेली/कविता तिवारी
44 पैने दाँतोंवाली/नागार्जुन

चित्रः सन्दीप, पाँचवीं, लक्ष्यम, दिल्ली

आवरण चित्र
अतनु राय

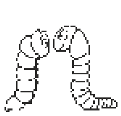

हाशिए के चित्र
दिलीप चिंचालकर

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी
मिताली अहीर

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

वितरण
झनकराम साहू

सहयोग
वरुण ग्रोवर
प्रभात
मिहिर
कमलेश यादव

एक प्रति :	30.00	-	व्यक्तिगत
	50.00	-	संस्थागत
वार्षिक :	300.00	-	व्यक्तिगत
	500.00	-	संस्थागत
तीन साल :	800.00	-	व्यक्तिगत
	1350.00	-	संस्थागत
आजीवन :	4000.00	-	व्यक्तिगत
	6000.00	-	संस्थागत

विप्रो एप्लाइंग थॉट इन स्कूल्स के वित्तीय सहयोग से विकसित

सभी डाक खर्च हम देंगे।
चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं। भोपाल के बाहर के चैक में 80.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोनः (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्सः (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

- भूमिका, आठ साल,
आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल,
भोपाल

- शिवम शेखर, नवीं,
डी.पी.एस पटना, बिहार

बोलीरंगोली

- चन्दना, नवीं,
विद्या ज्ञान स्कूल
सीतापुर, उ.प्र

बारह महीने बाद इस घर की
नम्बर प्लेट बदलती है
पता-वता रहता है वही
पर घड़ी दुबारा चलती है
- गुलज़ार

दोस्तो,
इस बोली रंगोली को
तुमने बखूबी समझा। अर्थों का एक गुच्छा मिला तुम्हारे चित्रों में। गुलज़ार साब के पसन्दीदा छह चित्र पेश हैं। इन सभी को उपहार में चकमक की एक साल की सदस्यता मिलेगी। सत्रह चित्र और भी हैं जो हमें पसन्द आए।

कई बार डाक देरी से पहुँचती है। इसीलिए हम इस साल एक साथ दो महीनों की पंक्तियाँ दे रहे हैं। अब तुम्हें खूब समय मिलेगा। मार्च के अंक की कविता तो तुम्हें पहले से ही पता है।

मार्च की कविता -

जनवरी, फरवरी, बचपन ही से
बहन भाई से लगते हैं
ठण्ड में मुँह से धुआँ उड़े तो
लगता है कि लड़ते हैं!

अप्रैल की कविता भी सुनो -

अच्छे भले थे, पूरे थे हर बात में मगर
आइने में देखा तो, दो टुकड़े हो गए!

-गुलज़ार

- अनघा ए. आठवीं, शासकीय उच्चतर माध्यमिक स्कूल, मल्लापुरम, पेरूवल्लूर, केरल

- मोईरंगदेम देबादश, आठवीं, असम राईफल्स मिडिल स्कूल, केकचिंग

- राहुल श्रीवास्तव, छठीं, राष्ट्रीय बाल भवन, नईदिल्ली

हो सकता है बड़े तुम्हें इसके अर्थ बताएँ। उनके अर्थ सुनो-समझो पर चित्र अपने मन का ही बनाओ...। कोशिश करना कि मार्च का तुम्हारा चित्र हमें 8 फरवरी तक मिल जाए। चित्र के साथ अपना पता, कक्षा, फोन नम्बर ज़रूर लिखना। हमारा पता है -

चकमक, एकलव्य,
ई-10, शंकर नगर, शिवाजी नगर,
भोपाल -16 (फोन - 09425010115)

छतरी

मंज़ूर एहतेशाम

देखा जाए तो झगड़ा होना ही था लेकिन वह जिस तरह हुआ था, यह अन्दाज़ा किसी को नहीं था। खुद जिन लोगों ने शुरुआत की, उन्हें भी नहीं। दरअसल शहर कुछ होने का इन्तज़ार करते-करते थक गया था।

गर्मी का लम्बा मौसम गुज़ारने के बाद लोगों की मानसून की उम्मीदें गलत साबित हुई थीं और बरसात का डेढ़ माह सूखा बीत चुका था। सारे देश में बरसात, पानी और बाढ़ की खबरें, हर माध्यम से शहर पहुँच रही थीं। और शहर तप और झुलस रहा था जैसे किसी ने जादू करके बादलों के आने पर पाबन्दी लगा दी हो। लोग बारिश न होने की बात करते-करते इतने थक गए थे कि यह विषय ज़बान पर आना बन्द हो गया था। अपनी व्यस्तता से पल-भर छुटकारा पाकर वे भाव-शून्य आँखों से आकाश की ओर देखते और थकान तथा निराशा पर पर्दा डालने, दोहरी मेहनत से रोज़ के कामों में जुट जाते। पूजा और नमाज़ ही नहीं, अभी तक शहरवासी बारिश न होने के विरोध में जलसा, धरना और बन्द, सब कर चुके थे और अब अगर बारिश न हो तो कहाँ जाएँगे, सोचते बैठे थे।

शहर को दो अलग-अलग हिस्सों में बाँटती वह सड़क थी जिसके एक तरफ सैनेट्री का थोक मार्केट था और दूसरी ओर फर्नीचर, हैंडलूम, कीमती क्रॉकरी के शो-रूम। सड़क पर दिन के एक खास समय, दुकानदारों की नज़रें किसी के इन्तज़ार में बेचैन रहने लगी थीं। वह कौन था, लोग उसका नाम तक नहीं जानते थे। रोज़, उस खास समय, दुनिया से बेनियाज़ वह उनके बीच में गुज़रता। कीमती कपड़े, बरसाती जूते पहने। हाथ में फोल्डिंग छतरी लिए वह इस तरह निकलता जैसे बरसात होने ही को हो। लोगों को लगने लगा था कि वह हमेशा से उसे इसी हुलिए में देखते आए हैं। वे यह सोचकर नाराज़ होते जा रहे थे कि यह आदमी बरसात न होने पर उनका और शहर का मज़ाक उड़ाता घूमता है। वह जब भी सड़क से गुज़रता लोगों की घृणा-भरी नज़रें उसका, ओझल होने तक पीछा करतीं।

हर शहर का अपना भूगोल होता है जो उसका मौसम और मिज़ाज तय करता है। इस शहर की खासियत यहाँ के ताल-तलैया और पहाड़ थे जिनके साथ-साथ ही आबादी का फैलाव था। बीते सालों में यहाँ आबादी बढ़ी थी जिसके अनुपात में शहर की दीगर चीज़ों का विकास नहीं हो पाया था। एक ज़माने से पीने के पानी के लिए तालाब थे जो अब भी, उसी तरह ज़रूरी थे। शहर के पास कोई बड़ी नदी नहीं बहती थी, सिर्फ छोटी-छोटी बरसाती नदियाँ थीं। तो भी मौसम की पहली बरसात में साल-से-साल ऊँच-नीच होती रही हो मगर इतने लम्बे समय तक पानी न गिरना किसी को याद नहीं था।

दिन-ब-दिन बारिश का न होना शहर के लिए मुसीबत बनता जा रहा था। इसका विज्ञापन वे तालाब थे जिनके तट सिमटकर नीचे चले गए थे और पानी तलछट में छूटा रह गया था। लगता किसी सुबह जब लोग जागेंगे, तालाब सूखे मिलेंगे। वह शहर में सबके लिए अन्तिम दिन होगा। इधर सारे अन्देशों में घिरा जीवन था, उधर देश के जल-थल होने और जगह-जगह सैलाब की खबरें थीं। ट्रांज़िस्टर और टी.वी. पर वर्षा का उत्सव मनाते, मेघ और मल्हार, झड़ी और फुवार के गीत थे जिनमें बिजली-बादल-पानी और दिल-धड़कन का लेखा-जोखा था। शहर में रहनेवाले यह मानने पर मजबूर होते जा रहे थे कि यह सब किसी और जनम और जीवन से सम्बन्धित था जिसे उन्हें भूलकर जीना था। एक बेबसी का एहसास उन्हें गुस्से से भरता जा रहा था। सड़क के दुकानदारों की ही तरह।

दरअसल यह सड़क और इसका बाज़ार कई मायने में शहर का प्रतिनिधित्व करते थे। यहाँ मालदार से लेकर मामूली पूँजीवाले व्यवसायी दुकानें खोले बैठे थे, धर्म और जाति में विभाजित हुए बिना। जब चिलचिलाती धूप में कीमती कपड़े, बरसाती जूते पहने वह अजनबी, हाथ में फोल्डिंग छतरी लिए, नपे-तुले कदम उठाता सड़क से गुज़रता तो सब लोग एक-समान अपमानित महसूस करते। और उसके नज़र से ओझल होते ही, बिना उसका नाम भी लिए, अपने-अपने काम में जुटकर खुद को थकाने और उसको भुलाने की कोशिश करने लगते।

धीरे-धीरे लोगों को सारी उलझनें, निराशाएँ और गुस्सा टाँगने को "बरसात-क्यों-नहीं-हो-रही" की खूँटी मिल गई थी। इस खूँटी को हर एक मनमानी सूरत-शक्ल में ढालने में लग गया था। देश में राजनीति के नाम पर जो अप्रिय हो रहा था, परिवारवालों को जो एक-दूसरे से गिले-शिकवे थे, धन्धे में जो घाटा था, प्रेम में जो असफलता या दोस्ती में जो धोखाधड़ी, सब किसी क्षण बरसात न होने के गुस्से की आँच को भड़का जाते। हर एक यह मानकर चलने लगा था कि उसका पड़ोसी इस संकट का कारण था। जैसे सड़क के दुकानदारों के लिए फोल्डिंग छतरी लेकर गुज़रनेवाला सारी मुश्किलों की जड़ और बारिश न होने का कारण तय हो चुका था। एक-दूसरे से कहे बगैर, यह लोगों की आम सहमति बन गई थी। आपस में लड़ने का जोखिम उठाए बिना उन्होंने फोल्डिंग छतरीधारी को अपना दुश्मन और गुस्से का निशाना बनाना तय कर लिया था। दिन की एक खास घड़ी में अब वे उसके आने का इन्तज़ार करने लगे थे।

हाथ में फोल्डिंग छतरी लिए सड़क से गुज़रता वह अजनबी दुकानदारों के लिए सारी मुश्किलों की जड़ और बारिश न होने का कारण तय हो चुका था।

राह से गुज़रनेवाले व्यक्ति में, अगर वह चिलचिलाती धूप में छतरी लेकर न चलता तो अलग से कोई खासियत नहीं थी। वह किसी कम्पनी के सेल्समैन से लेकर किसी बैंक में काम करनेवाले कर्मचारी तक, कुछ भी हो सकता था। यह अनुमान इसलिए लगाया जा सकता था कि वह कपड़े-जूते करीने से पहनता था, बाल सँवरे हुए और गले में प्रायः टाई बँधी रहती थी। चलते हुए नाक की सीध में देखता वह किसी गुत्थी को सुलझाता, सोचता नज़र आता था। पूरे बाज़ार में उसकी किसी से अलेक-सलेक नहीं थी। वह रोज़ आता दिखाई देता। उसे सड़क से लौटकर जाते किसी ने नहीं देखा था। उसके कदम उठाने में एहतियात थी जैसे एक-एक पैर तय करके रख रहा हो। धीरे-धीरे सबको पक्का यकीन हो गया था कि उनके "पानी-कब-गिरेगा" सोचते चेहरों को देखता, व्यंग्य से मुस्कराता, वह लहक-लहककर कदम उठाता है। उसकी एक-एक अदा उन्हें चिढ़ाने की है।

आसपास के दुश्मनों से बेनियाज़ फोल्डिंग छतरीधारी सड़क पर रोज़ अपना रास्ता तय कर रहा था।

बीती रात टेलीविज़न पर, धूप में जलते, नफरत में सुलगते शहर ने जो फिल्म देखी थी उसके फोकस में बरसात और पानी में भागते-गाते नायक-नायिका, नदी-नाले और हरियाली थी। साथ ही मौसम की भविष्यवाणी, सैटेलाइट द्वारा खींचे गए चित्र सहित, अगले दिन शहर में भारी बरसात की थी। चित्र में घने बादल सबको शहर पर घिरे नज़र आए थे। और कई बार की टूटी आशा फिर जुड़ी थी कि शायद इस बार पानी गिर जाए। बरसात के ख्वाब देखता शहर रात-भर गर्मी में बेचैन रहा था। सुबह जब लोग जागे थे तो गँदला आसमान और सूरज को तेज़ी से चमकता पाया था। पिछली रात की फिल्म और मौसम विभाग की भविष्यवाणी सबको एक भौंडा मज़ाक लगी थी। सारे शहर ने अपने दिनों-दिन सूखते तालाबों को याद किया था और साथ मिलकर

चित्रः अतनु राय

भीड़ और मारपीट बढ़ती जा रही थी। सड़कपर ट्रैफिक रुक गया था। छीना-छपटी में कुछ लोग घायल हो गए थे। उनके हिमायती और उनसे लड़नेवालों के गिरोह बन गए थे।

सोचा था – "पानी कब गिरेगा?" और फिर सब अपनी-अपनी दिनचर्या में व्यस्त हो गए थे।

सड़क के बाज़ार की दशा उस दिन इसलिए और खराब थी कि बिजली न होने के कारण कूलर और पंखे बन्द थे। अधिकांश दुकानदार उस समय दुकानों के बाहर बरामदे में साँस लेने को निकले हुए थे जब किसी जादू में बँधकर उन्होंने चौराहे की ओर देखा था जहाँ फोल्डिंग छतरीवाला, नपे-तुले कदम उठाता आ रहा था। साफ-सुधरे कपड़े, टाई, छाता, धीरे-धीरे मुख्य बाज़ार के बीच आगे बढ़ता। लैटर-बॉक्स, पान की दुकान, अखबार और रिसाले-पत्रिकाओं के स्टॉल के सामने से निकलकर उस पल वह एस.टी.डी.पी.सी.ओ. के पास था जब कोई उससे टकराया था। टकराने से उसका सन्तुलन गड़बड़ाया। वह सँभल भी न पाया था कि किसी और ने बढ़कर धक्का दे दिया। वह नाली में गिरते-गिरते बचा था। देखते-ही-देखते वह लोगों से घिर गया था जिनके बीच उसका छाता छीनने के लिए छीना-झपटी शुरू हो गई थी। कुछ ही देर में लोग उसे भूल गए थे। उसका छाता हथियाने के लिए उनमें होड़ लगी थी और आपस में मारपीट शुरू हो गई थी। भीड़ और मारपीट बढ़ती जा रही थी। सड़क पर ट्रैफिक रुक गया था। छीना-छपटी में कुछ लोग घायल हो गए थे। उनके हिमायती और उनसे लड़नेवालों के गिरोह बन गए थे। ज़ोर का धमाका, जो किसी टायर बर्स्ट होने का था, सुनकर लोगों में भगदड़ मच गई थी। सड़कके दोनों ओर दुकानों के शटर गिरने लगे थे। मारपीट बढ़ गई थी। पुलिस आ गई थी और हालात को काबू में रखने के लिए हवाई फायरिंग करनी पड़ी थी। आग-सी तेज़ी से शहर में बलवे की खबर फैल गई। आसार कर्फ्यू लगने के थे कि लोगों का ध्यान बढ़ते अँधेरे और आकाश में घिर आए बादलों की ओर गया। इससे पहले कि कर्फ्यू का सोचा जाता, शहर में अटाटूट बारिश शुरू हो चुकी थी जो आनेवाले आठ दिनों तक बिना एक पल भी थमे होती रही थी। शहर में छतरियाँ और बरसातियाँ चौतरफ नज़र आने लगी थीं। सूखते तालाब पानी से लबालब हो गए थे। निचले इलाके डूब में आ गए थे। लोग अपने मकानों की देखरेख और बरसात के मज़े लेने में लग गए थे। झगड़े की याद बरसात के पानी में घुल गई थी। आठ दिन की झड़ी के बाद भी बादल शहर पर छाए रहे थे और थम-थमकर दिनों तक बरसते रहे थे।

अगली बार जब अजनबी छतरी लगाए, फुटपाथ और सड़क पर जमे पानी के बीच एहतियात से कदम रखता उस सड़क से गुज़रा तो न तो उसे किसी ने गौर से देखा, ना ही पहचाना। खुद वह यह कभी नहीं समझ पाया कि उस दिन उसकी छतरी को लेकर शहर दीवाना होते-होते क्यों बचा था!

रेडियो का भेड़िया

प्रभात

अब ये कोई दूर की बात भी नहीं है। यहीं की है – अपने गढ़मोरा गाँव की। एक किसान का मज़दूर लड़का दिल्ली से कमाकर लौटा। साथ में रेडियो भी लाया। यह कहानी बहुत पुरानी नहीं है – महज़ तीस साल पुरानी है। और आज से तीस साल पहले गाँव में बिजली नहीं थी। रेडियो, टीवी का लोगों ने नाम भी नहीं सुना था। इलाके में आया वह पहला रेडियो था।

कहते हैं रेडियो बहुत गाता था। बहुत बोलता था और मज़े की बात तो यह कि थकता बिलकुल नहीं था। इससे पहले इलाके में ऐसे-ऐसे किस्सागो हुए जो किस्से कहते नहीं थकते थे और लोग उन्हें सुनते नहीं थकते थे। मगर एकाध रात के बाद वे चुप हो जाते थे। कहीं और चले जाते थे। ऐसे-ऐसे गवैये हुए जिन्हें सुनने पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस हज़ार लोग जुटते। दिन-रात के दंगल भरते थे उन्हें सुनने के लिए। मगर वे गवैये भी दो-तीन गाने के बाद

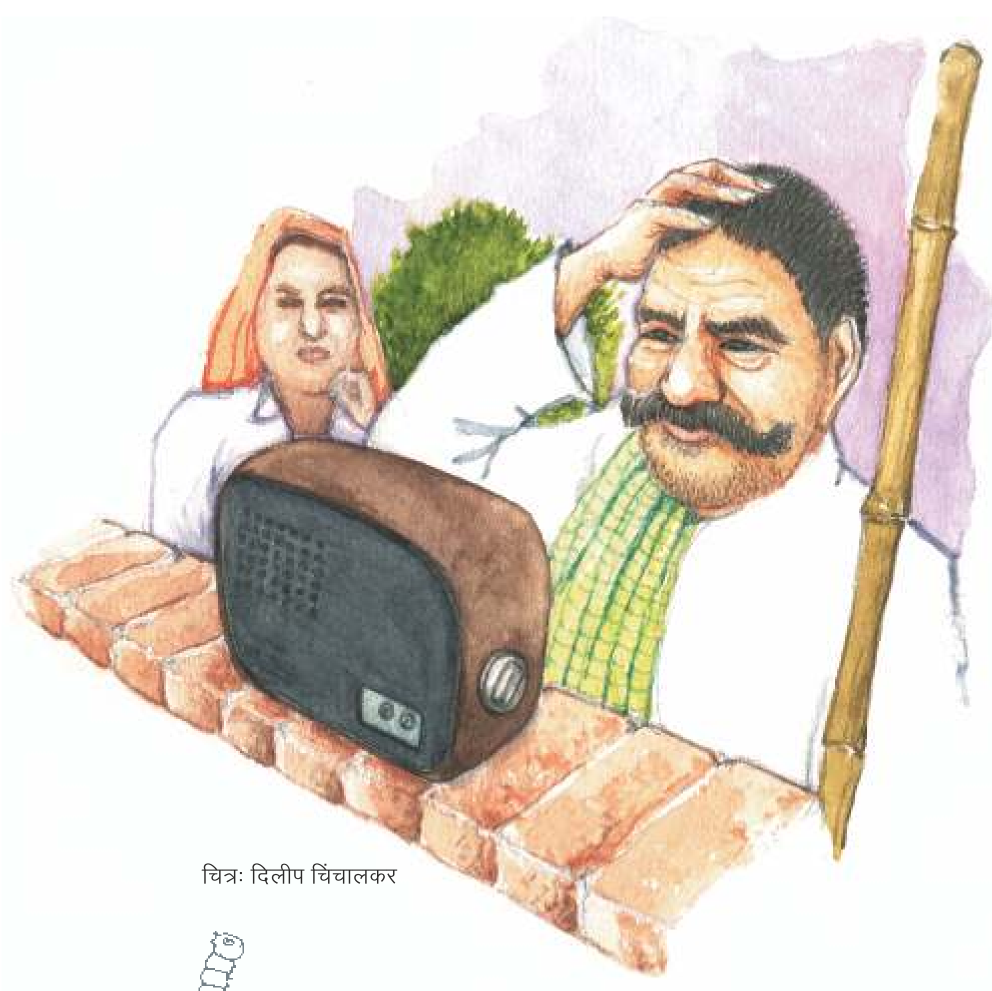

चित्रः दिलीप चिंचालकर

अपनी-अपनी जगहों पर वापस लौट जाते थे। तो साब लड़के ने रेडियो लाकर घर की दीवार पर रख दिया। वह गाता ही आया था और दीवार पर रखे जाने के बाद भी लगातार गा रहा था।

लड़के के पिता खाट पे सोते-सोते यह सब तमाशा देख रहे थे। सुन रहे थे। वे इसके बारे में काफी सारे सवाल-जवाब अपने बेटे से कर चुके थे कि यह है कौन? और तू इसे क्यों अपने गले पटक लाया है? ये खाता-पीता क्या है? इसके मुँह और ज़बान ही नहीं तो यह गा कैसे लेता है? और वैसे इसमें करामात चाहे जो भी वास्तव में तो यह धरती पर बोझ ही है क्योंकि उठाने से उठता है, बैठाने से बैठता है। अच्छी बात इसमें एक है कि टट्टी-पेशाब नहीं करता है। बात भी सही है खाएगा-पिएगा नहीं तो फिर यह सब कैसे करेगा! ताज्जुब होता है कि यह ज़िन्दा कैसे है?

लड़के के पिता को अपनी ज़िन्दगी और अपनी दुनिया में ऐसी चीज़ की कोई ज़रूरत नहीं थी और वे रेडियो से मन ही मन नफरत करने लगे थे। उन्हें अपने जीवन में इसका कोई उपयोग नज़र नहीं आता था। और जब उन्हें पता चला कि उनके लड़के ने इसे पैसों के बदले में खरीदा है तब तो उन्हें और भी दुख हुआ क्योंकि उन्हें लगता था इसमें ऐसा है ही क्या जिसका पैसा चुकाया जाए। बल्कि मेरे जैसा इसे अपने पास रखने के बदले में पैसे

मिलते हों तब भी न रखे। फिर उन्होंने यह सोचकर अपने को दिलासा दी कि लड़का अभी नादान है सो इस खिलौने में लगा है। शादी के बाद जब नमक, तेल, मिर्ची के फेरे में पड़ेगा तो रेडियो-फेडियो सब भूलभाल जाएगा। फिर उन्हें न जाने क्या सूझा कि मन ही मन कहने लगे कि इसका नाम रेडियो नहीं भेड़िया होना चाहिए। जिसकी सही जगह तो जंगल में है लेकिन यह गाँव में घुस आया है। भेड़िया गाँव में घुसकर कोई फायदा पहुँचाने से तो रहा! पहुँचाएगा नुकसान ही। तो गाँववाले कोई बेवकूफ थोड़े ही हैं। शाम तक खैर नहीं माई के लाल की।

लड़का दिल्ली जाकर भी भैंसों का दूध निकालना भूला नहीं था। वह दूध निकालने बाड़े में चला गया था। इस बात से लड़के की माँ बहुत ही खुश हुईं। हँस-हँसकर चूल्हे में लकड़ियाँ देने लगीं।

उधर लड़के के जाते ही रेडियो के बारे में मन ही मन काफी सोच-विचार कर चुके पिता ने रेडियो से कहा, "भाई छोरा तो गया भैंस का दूध काढने और अब तू भी थोड़ी-बहुत देर आराम कर ले। चुप हो जा।" चुप होना तो दूर की बात रेडियो ने अपना सुर ज़रा नीचा भी नहीं किया। लड़के के पिता को रेडियो की यह हरकत अखरी मगर घर में पहली बार आया है यह सोचकर थोड़ा गम खा गए। बोले, "भाई मैं तो तेरे अच्छे के लिए ही कह रहा हूँ। देख रहा हूँ आया है जब से तूने चैन से साँस भी नहीं ली है। अब तू चुप हो जा।"

रेडियो तो एक के बाद एक गाने बदल-बदलकर गा रहा था। लड़के के पिता को यह उनकी तौहीन लगी। बोले, "मूरख! मैं भाईबीरे से समझा रहा हूँ और तू है कि सुर बदल-बदलकर गा रहा है। इस घर का मुखिया मैं हूँ कि तू?" इस बार वे भूल गए थे कि रेडियो उनके घर में पहली बार आया है और किसी पहली बार आए से इस तरह बर्ताव करना ठीक बात नहीं। वे रेडियो को तड़ी लगा रहे थे, "तू निरा बावड़ा ही है क्या? दो बार कह दी चुप हो जा। तू कहे तो तेरे कोहनी तक हाथ जोड़ दूँ।" ऐसा कहते हुए उन्होंने सचमुच रेडियो के कोहनी तक लम्बे हाथ जोड़े और कहा, "अब बस।" रेडियो फिर भी चुप नहीं हुआ तो उन्होंने पगड़ी उतारकर उसके पास रख दी, "अब इससे ज़्यादा क्या करूँ? अरे, इसकी तो लाज रख। कतई चुप हो जा मेरा भाई।"

अब तो रेडियो दो-दो आवाज़ों में गाने लगा। एक ही बात को एक बार औरत की आवाज़ में और एक बार मरद की में। अब तो लड़के के पिता के तन-बदन में आग लग गई। बोले, "कुछ हया-शरम ही नहीं है क्या?" उनकी आँखों से चिंगारियाँ निकलने लगीं। खाट से उठ बैठे। डण्डा हाथ में लिया। उसे दोनों हाथों में मज़बूती से पकड़ा। और पूरी ताकत से एक ज़ोरदार प्रहार रेडियो पर किया। रेडियो का पुर्जा-पुर्जा खुल गया। औरत-मरद की आवाज़ निकालना तो दूर वो चूँ-चाँ भी नहीं कर रहा था।

लड़के के पिता ने डण्डा एक ओर पटकते हुए मन में भरे गुबार को निकाला, "तेरा दोष नहीं है भाई। ज़माना ही ऐसा है। बड़े लोगों ने कही है वह कोई झूठ थोड़े ही कही है – जो जूता में है वो तो गीता में भी नहीं है। अब तू एक ही में चुप हो गया कि नहीं!"

ऐसा कहने के बाद लड़के का पिता वापस खाट पे जाकर सो गया और खुद गाने लगा। रात की चाँदनी का दूध धरती पर सब जगह फैला था। आकाश से मानो अमृत बरस रहा हो।

कुछ देर बाद लड़का आया। उसने रेडियो की जगह रेडियो का कबाड़ पड़ा देखा। उसने यह भी देखा कि उसका पिता एक लोकगीत को रस ले-लेकर गा रहा है–

ऐ हे रे सबसे मीठौ बोलैगौ तो बिघन हटैगौ।

नर छोड़ो बैर बिषै कू फंद कटैगौ।

लड़का चुपचाप लौट गया। अगली सुबह सूरज उगने से पहले ही उसने अपना थैला उठाया और वापस दिल्ली लौट गया। मानो जो एक बार दिल्ली में रह ले वो फिर कभी अपने गाँव में रह ही नहीं सकता है।

लड़के के पिता का कहना है कि ऐसे तमाशे तो आते-जाते रहते हैं। मूरख लड़का तमाशे के पीछे बावड़ा होकर चला गया तो जाने दो। लड़के की माँ कहती हैं, "मेरा बेटा भैंसों का दूध दुहना नहीं भूला था। लेकिन रेडियो के भेड़िए के फेर में पड़कर माँ को ही भूल गया।"

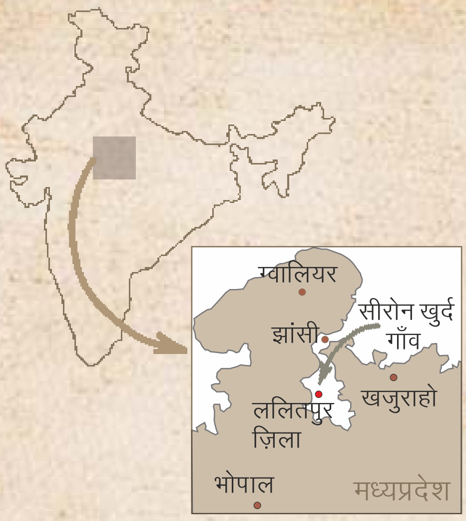

एक पाठ के लिए एक शहर की खोज

रश्मि पालीवाल

बात पुरानी है। कोई 26 साल पुरानी। हम कक्षा 7 के लिए सामाजिक अध्ययन विषय की एक पाठ्यपुस्तक बनाने का काम कर रहे थे। इसमें हम 700 से 1400 ईस्वीं के समय में आए बदलावों के बारे में बताना चाह रहे थे कि वे बदलाव कहाँ आए, व कैसे आए...। इसके लिए हमें कुछ ऐसे उदाहरणों की तलाश थी जिनसे उस समय के जीवन को जीता जागता-सा दिखा सकें। हम विश्वविद्यालयों में इतिहास पढ़ानेवालों, शोध करनेवालों से मिले। दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के हमारे प्रोफेसर बी. डी. चट्टोपाध्याय ने एक शिलालेख की पंक्तियाँ हमें दिखाईं। यह शिलालेख उत्तरप्रदेश के ललितपुर शहर के पास बसे सीरोन खुर्द गाँव में मिला था। इस शिलालेख में सीयडोणि नाम के एक नगर की कई घटनाओं की चर्चा है – सन् 900 से 965 ईस्वीं के बीच हुई घटनाओं की चर्चा।

प्रोफेसर चट्टोपाध्याय ने सुझाया कि इसकी कुछ पंक्तियों से शायद हमारा काम बन जाए। और काम सच में बन गया। इनसे न सिर्फ 1000 साल पहले के शहरों का नज़ारा जीवन्त हो उठा बल्कि इतिहास के मूल स्रोत को जानने व इस्तेमाल करने का मौका भी बच्चों को मिला।

इनकी मदद से हमने “एक पुराना शहर – सीयडोणि” नाम का पाठ लिखा। इसमें हमने जो सात पंक्तियाँ दी थीं वे कहती हैं:

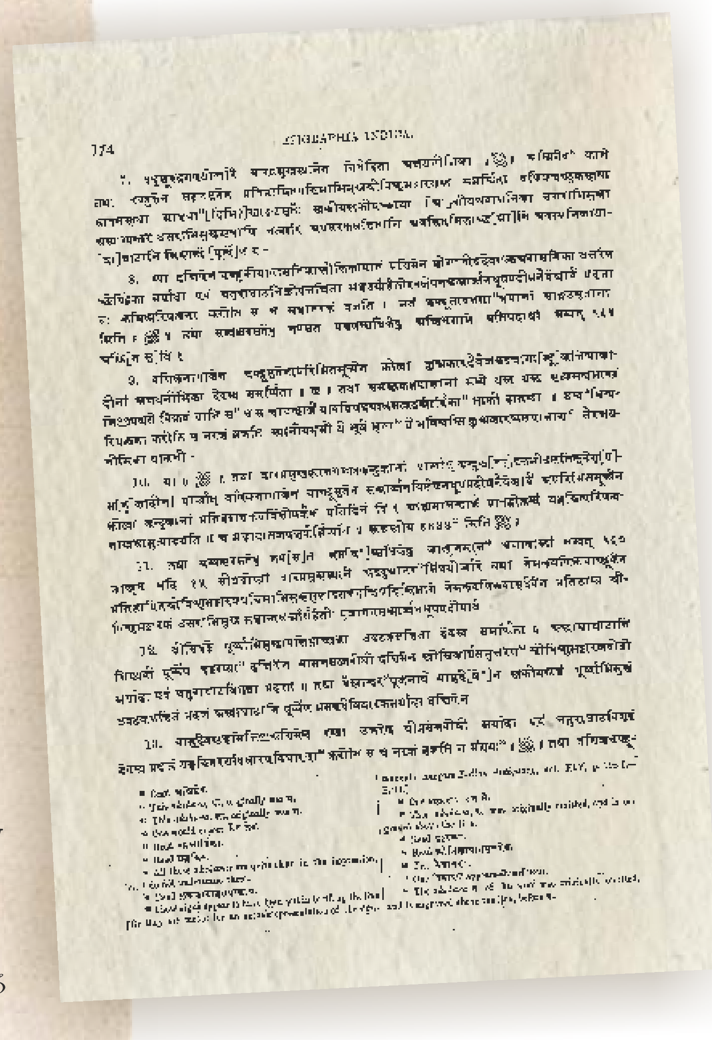
174 EPIGRAPHIA INDICA.

एपीग्राफिका इंडिका के एक पेज का चित्र

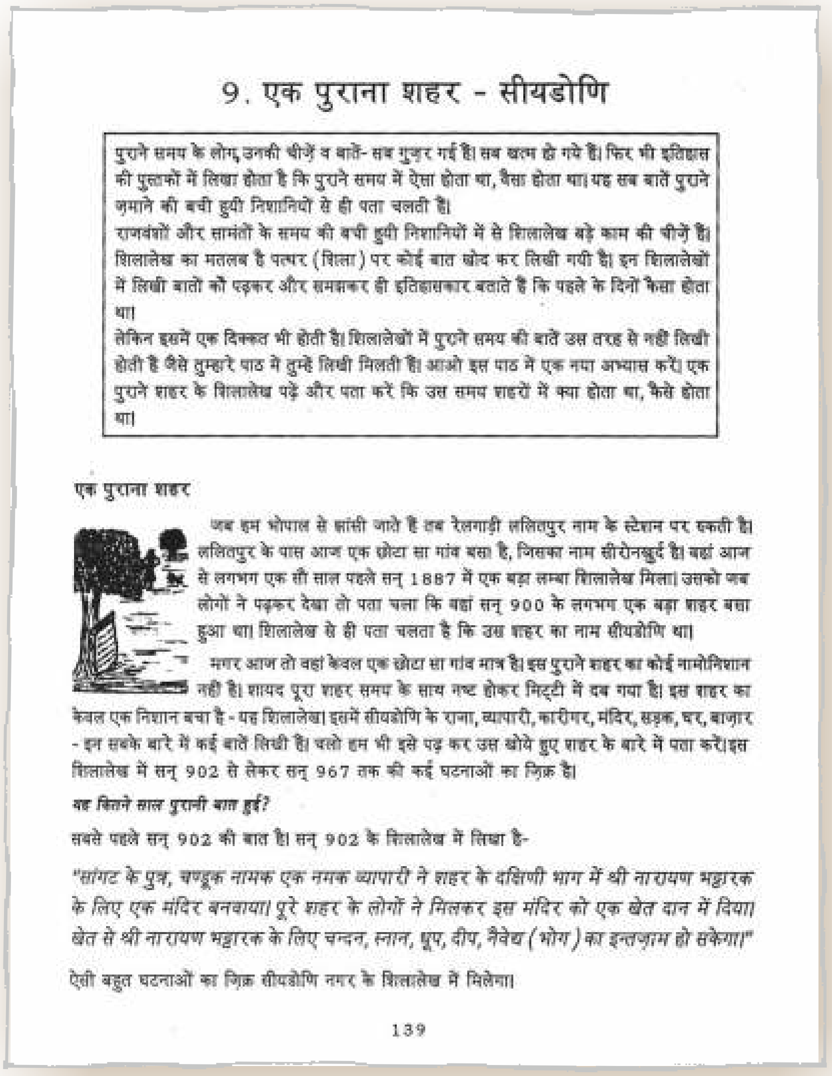

9. एक पुराना शहर - सीयडोणि

पुराने समय के लोग, उनकी चीज़ें व बातें- सब गुज़र गई है। सब खत्म हो गये है। फिर भी इतिहास की पुस्तकों में लिखा होता है कि पुराने समय में ऐसा होता था, वैसा होता था। यह सब बातें पुराने ज़माने की बची हुयी निशानियों से ही पता चलती है।
राजवंशों और सामंतों के समय की बची हुयी निशानियों में से शिलालेख बड़े काम की चीज़ें है। शिलालेख का मतलब है पत्थर (शिला) पर कोई बात खोद कर लिखी गयी है। इन शिलालेखों में लिखी बातों कों पढ़कर और समझकर ही इतिहासकार बताते है कि पहले के दिनों कैसा होता था।
लेकिन इसमें एक दिक्कत भी होती है। शिलालेखों में पुराने समय की बातें उस तरह से नहीं लिखी होती है जैसे तुम्हारे पाठ में तुम्हे लिखी मिलती है। आओ इस पाठ में एक नया अभ्यास करें। एक पुराने शहर के शिलालेख पढ़े और पता करें कि उस समय शहरों में क्या होता था, कैसे होता था।

एक पुराना शहर

जब हम भोपाल से झांसी जाते है तब रेलगाड़ी ललितपुर नाम के स्टेशन पर रुकती है। ललितपुर के पास आज एक छोटा सा गांव बसा है, जिसका नाम सीरोनखुर्द है। यहां आज से लगभग एक सौ साल पहले सन् 1887 में एक बड़ा लम्बा शिलालेख मिला। उसको जब लोगों ने पढ़कर देखा तो पता चला कि यहां सन् 900 के लगभग एक बड़ा शहर बसा हुआ था। शिलालेख से ही पता चलता है कि उस शहर का नाम सीयडोणि था।

मगर आज तो वहां केवल एक छोटा सा गांव मात्र है। इस पुराने शहर का कोई नामोनिशान नहीं है। शायद पूरा शहर समय के साथ नष्ट होकर मिट्टी में दब गया है। इस शहर का केवल एक निशान बचा है - यह शिलालेख। इसमें सीयडोणि के राजा, व्यापारी, कारीगर, मंदिर, सड़क, घर, बाज़ार - इन सबके बारे में कई बातें लिखी है। चलो हम भी इसे पढ़ कर उस खोये हुए शहर के बारे में पता करें। इस शिलालेख में सन् 902 से लेकर सन् 967 तक की कई घटनाओं का ज़िक्र है।

यह कितने साल पुरानी बात हुई?

सबसे पहले सन् 902 की बात है। सन् 902 के शिलालेख में लिखा है-

"सांगट के पुत्र, चण्डूक नामक एक नमक व्यापारी ने शहर के दक्षिणी भाग में श्री नारायण भट्टारक के लिए एक मंदिर बनवाया। पूरे शहर के लोगों ने मिलकर इस मंदिर को एक खेत दान में दिया। खेत से श्री नारायण भट्टारक के लिए चन्दन, स्नान, धूप, दीप, नैवेद्य (भोग) का इन्तज़ाम हो सकेगा।"

ऐसी बहुत घटनाओं का ज़िक्र सीयडोणि नगर के शिलालेख में मिलेगा।

139

एकलव्य, कक्षा 7 से
सीयडोणि वाले पाठ का पहला पन्ना

– सीयडोणि के एक नमक व्यापारी ने सन् 902 में नारायण भगवान का एक मन्दिर बनवाया। इसके खर्चे के लिए शहर के लोगों ने मिलकर एक खेत दान में दिया।

– सीयडोणि के सामन्त ने अधिकारियों को सूचना दी कि मन्दिर के लिए शहर की मण्डी से हर रोज़ कुछ सोने के सिक्के दिए जाएँगे।

– नमक व्यापारी के बेटे ने शहर के कन्दुकों (शक्कर बनानेवालों) के पास कुछ पूंजी जमा की और उनसे कहा कि उसके बदले वे हर दिन कुछ शक्कर मन्दिर के लिए देंगे।

– नमक व्यापारी ने प्रसन्न हट्ट (बाज़ार) की अपनी एक दुकान मन्दिर को दान में दी।

– सुपारी बेचनेवाले एक व्यापारी ने चतुर्हट्ट (बाज़ार) की अपनी एक दुकान मन्दिर को दान में दी

– शहर के कई सिलाकूटों (पत्थर की शिलाएँ काटनेवालों) ने तय किया कि वे काटी गई हर शिला को बेचने से मिले पैसों में से कुछ द्रम्म (उस समय की मुद्रा) मन्दिर को देंगे।

– शहर के कुछ तेलिकों (तेल की घाणी चलानेवालों) ने तय किया कि वे हर रोज़ थोड़ा तेल मन्दिर के दीए जलाने के लिए देंगे।

यह पाठ बच्चों को कई तरह की गतिविधियाँ करने का मौका भी देता है। अलग-अलग समय में इसे कई जगहों में पढ़ाया गया – मध्यप्रदेश में होशंगाबाद, हरदा, देवास ज़िलों में और राजस्थान के पीसांगन विकासखण्ड के शासकीय स्कूलों में भी। अँग्रेज़ी में इसका अनुवाद कुछ प्राइवेट स्कूलों में पढ़ाया गया। देश में इतिहास शिक्षण पर हुए कई प्रशिक्षणों में भी इसका उपयोग हुआ। पर अफसोस कि सीयडोणि (आज का सीरोन खुर्द) के बच्चों व शिक्षकों तक यह आज तक नहीं पहुँच पाया।

सीयडोणि का पता कब और किसे लगा

यह तो पता नहीं कि सीयडोणि का शिलालेख सबसे पहले कहाँ और कब मिला। यह साढ़े पाँच फीट चौड़ा और साढ़े चार फीट लम्बा पत्थर का पटिया है जिस पर चालीस लाइनों में बहुत सफाई से अक्षर खुदे हैं। पर जान पड़ता है कि 19वीं शताब्दी में कभी इस इलाके के एक व्यापारी ने पत्थर के इस पटिए को सीरोन खुर्द के शान्तिनाथ के जैन मन्दिर में रखवा दिया था। फिर कभी किसी और व्यक्ति ने इस पर खुदी पंक्तियों की ध्यान से नकल उतारकर अपने पास रख ली।

अँग्रेज़ जब भारत में शासन करते थे, उन्हें यहाँ के इतिहास, भूगोल, भाषा, धर्म आदि को जानने-समझने में बड़ी दिलचस्पी रहती थी। ऐसे में किसी ने वह नकल एक अँग्रेज़ अफसर को दे दी। उन दिनों एक पत्रिका छपती थी जिसमें पुरानी चीज़ों की खोज की रपटें होती थीं। तो *जर्नल ऑफ द बेंगॉल आर्किओलॉजिकल सोसाइटी* में यह खबर छपी कि ग्वालियर स्टेट में कहीं पर एक बहुत बड़ा शिलालेख मौजूद है। पर वह कहाँ है यह ठीक से पता नहीं है।

मन्दिर की दीवार पर लगे शिलालेख को देखते हम

शिलालेख

सन् 1887 की बात है। ललितपुर ज़िले में डॉ. बर्जेस नाम के एक अध्ययनकर्ता काम कर रहे थे। उन्होंने सुना था कि ललितपुर से 10 मील दूर, सीरोन खुर्द गाँव में एक बहुत बड़ा शिलालेख है। डॉ. बर्जेस उसे देखने गए। उन्हें वह एक जैन मन्दिर में मिला। उन्होंने पता किया तो पाया कि यही वह शिलालेख है जिसकी खबर बंगाल जर्नल में छपी थी। बर्जेस ने इस पर एक रिपोर्ट लिखी। इस लेख के आधार पर एक प्रोफेसर कीलहोर्न ने उन चालीस पंक्तियों का सम्पादन किया जो "एपीग्राफिका इंडिका" नाम की पत्रिका में छपा।

हमारा सीरोन खुर्द (उर्फ सीयडोणि) जाना

सीयडोणि जाकर खुद उस शिलालेख को देखने की हसरत किताब बनाने के समय से ही मन में थी। सालों तक यह मन में बनी रही। जाने का कोई मौका न मिला। पर पिछले दिनों जब एक मौका हाथ लगा तो हमने उसे जाने न दिया।

एपीग्राफिका इंडिका के पन्नों की एक प्रति हमने साथ रखी (अफसोस कि कक्षा 7 की हमारी किताब रखना भूल गए) और होशंगाबाद से ट्रेन पकड़कर झाँसी पहुँचे। एक दिन ओरछा की इमारतों और झांसी संग्रहालय की मूर्तियों व चित्रों को देखने में लगाया। झांसी के संग्रहालय में सीयडोणि से मिली कई मूर्तियाँ रखी हुई हैं। उस रात हम ललितपुर ही रुके। अगले दिन गाड़ी लेकर 12-15 किलोमीटर दूर सीरोन खुर्द के लिए निकल पड़े। रास्ते में जिनसे भी हमने सीरोन खुर्द का रास्ता पूछा उन्हें ज़रूर लगा होगा कि हम शान्तिनाथ के जैन मन्दिर ही जा रहे हैं। जैन सम्प्रदाय के लोग यहाँ काफी संख्या में आते हैं। जब उनसे सीयडोणि और शिलालेख की बात कही तो किसी को कुछ भी नहीं सूझा। हमें थोड़ा शक होने लगा कि उसका कुछ भी देखने को मिलेगा या नहीं!

गाँव तक की सड़क काफी खराब थी। गाँव से पहले ही जैन मन्दिर का बड़ा-सा प्रांगण आया और गाड़ी अन्दर चली गई। दोनों ओर जैन मूर्तियाँ सलीके से रखी हुई थीं। हम सोच रहे थे कि शायद किसी आँगन के कोने में या फिर किसी पेड़ के नीचे सीयडोणि का शिलालेख मिलेगा। मुख्य भवन पर पहुँचकर पूछताछ करी तो वहाँ का एक कर्मचारी हमें मन्दिर के अन्दर ले गया। एक बड़े-से आँगन के तीन तरफ कमरे व बरामदे बने थे। इनमें अलग-अलग तीर्थंकरों की मूर्तियाँ थीं। दाईं तरफ के एक कमरे का दरवाज़ा खोलकर हमें अन्दर भेजा गया। वहाँ एक दीवार में चुना हुआ यह मशहूर शिलालेख हमें दिखा। शिलालेख इतनी हिफाज़त से रखा मिलेगा यह हमने सोचा नहीं था। हमने उस में लिखे शब्दों को पहचानने की कोशिश की।

आज का सीरोन खुर्द

गाँव शुरू होने के साथ ही सड़क के पास पत्थर के स्तम्भ के दो टूटे हुए हिस्से खड़े हैं। कभी ये शिलाएँ किसी मन्दिर की इमारत के द्वार के रूप में खड़ी रही होंगी। न जाने क्यों लोग इस जगह को धोबी घाट के नाम से जानते हैं।

गाँव घूमने निकले तो एक छोटी-सी परचून की दुकान पर खड़े कुछ लड़कों से हमने बातचीत शुरू की। हम यह जानने में बड़ी दिलचस्पी थी कि क्या यहाँ आज कोई पान-सुपारी का व्यापार करता है, या शक्कर बनाने का, शिला तराशने का, नमक का ... ताड़ी बनाने का... क्या यहाँ खजूर के पेड़ हैं... क्या कहीं पत्थर की खदानें हैं.. पान की बाड़ियाँ हैं... यहाँ कौन-सी जातियों के लोग हैं... कब से हैं... । हम मन ही मन उम्मीद कर रहे थे कि एक हज़ार साल पहले के लोगों के वंशज हमें आज के लोगों में कहीं पहचान में आ जाएँ। पर लोगों के जवाबों से ऐसे कोई सुराग हमारे हाथ नहीं लगे। बहरहाल वे यह समझ गए कि हम पुरानी चीज़ों को खोज रहे हैं। कुछ बच्चे हमें वो सारी जगहें दिखाने ले गए जहाँ पुराने पत्थर रखे थे। वे हमें एक पुराने मन्दिर ले गए। वो शिव मन्दिर था। हम हर चीज़ को ध्यान से देखते हुए आगे बढ़े। लोग भी सोचते होंगे कि ये दोनों आखिर तलाश क्या रहे हैं!

गाँव के शुरू में बना द्वार जो धोबी घाट कहलाता है।

दान पत्र और उसको लिखनेवाले

कीलहोर्न लिखते हैं कि शिलालेख में इन पंक्तियों को लिखनेवाले संस्कृत में लिख ज़रूर रहे थे पर उनके लेखन में स्थानीय भाषा का असर था। जैसे, षष्टि की जगह षष्ठी लिखा है, ताम्बूलिक की जगह ताम्बोलिक लिखा है, वणिज की जगह वणिक, भित्ति की जगह भीती, श्रीधर की जगह सिरिधर। जहाँ त्रि लिखना चाहिए था (शुद्ध संस्कृत में) वहाँ तृ लिखा गया था – यानी, तृभुवन, तृभाग। इसी तरह बड़ी ई की मात्रा की जगह छोटी इ की मात्रा लगाकर कालिन लिखा गया है आदि आदि।

गनीमत है कि ये आलेख आजकल की किसी परीक्षा के लिए नहीं लिखे गए थे – ये लिखे गए थे एक और ही ज़रूरी काम के लिए। एक हज़ार साल पहले यहाँ एक अच्छा खासा शहर था – सीयडोणि। इस शहर में कई कारीगर और व्यापारी रहते थे, धन्धा व्यापार करते थे। उनमें से कई विष्णु देवता के भक्त थे। तो एक व्यापारी ने नारायण देव के लिए एक मन्दिर बनवाया। मन्दिर के कामकाज को चलाने के लिए लोगों ने अपनी-अपनी सुविधा से दान दिए। दान की बात को किसी चीज़ पर लिखकर दर्ज किया गया होगा। लिखनेवाले का नाम भी दर्ज किया जाता था। जैसे, दान के किसी लेख को सर्वहरि ने लिखा है जो कि भोजका का पुत्र है, दान का दूसरा कोई लेख रछ्छक ने लिखा है जो सर्वहरि का बेटा है .. । हो सकता है कि सबसे पहले दान पत्र भोजपत्रों पर लिखे गए हों। ऐसे कई साल बीतते गए – फिर दान के इन तमाम लेखों को इकट्ठा करवाकर किसी ने एक बड़े से पत्थर पर हमेशा के लिए सबकी जानकारी के लिए खुदवा दिया। यहाँ तक कि अब तो हम भी जानते हैं कि किसने मन्दिर को क्या दान दिया था। हो सकता है कि यह मन्दिर की तरफ से ही किया गया हो ताकि नई पीढ़ी के लोग भी अपने पूर्वजों द्वारा दिए दान को निभाते रहें। हो सकता है कि शहर का प्रशासन सम्भालने वाली समिति (जिसे पंचकुल कहा जाता था) ने इसे पत्थर पर खुदवाया हो....

हमारे दिमाग में तो खैर नारायण भट्टारक का मन्दिर घूम रहा था जिसे चण्डूक नाम के नमक व्यापारी ने सन 902 में बनवाया था। आज सीरोन खुर्द की गलियों की खाक छान लेने पर भी वो हमें कहाँ मिलने वाला था! (बल्कि हमें तो कोई विष्णु का ही मन्दिर नहीं दिखा।)। जिन लोगों, सड़कों, दुकानों का ज़िक्र शिलालेख में आया था उनके अनुसार हमने खुद एक बड़ी-सी पुरानी इमारत को सामन्ताधिपति उन्दभट्ट की हवेली नाम दे दिया। किसी गली को हट्टरथ्य (बाज़ार की मुख्य सड़क) तो किसी को चुंआ की वीथि...(चुंआ नाम के व्यक्ति की दुकान) नाम देते गए और खुश होते रहे।

आँगन में रखा यह मटका एक सुन्दर तराशे हुए शिलाखण्ड पर विराजमान है।

एक ठहरा हुआ-सा लम्हा – इन पत्थरों, पेड़ों, लोगों की निगाहें क्या-क्या देख चुकी हैं अपने सामने से गुज़रता हुआ...और अब चबूतरों पर पड़े हैं पुरानी इमारतों के पत्थरों के ढेर, लोगों के घरों में बरता जा रहा है इन्हें...

समय का बहाव यही तो है – एक युग बीत जाता है, कुछेक सुराग छोड़ जाता है, पर तमाम सारी चीज़ें मिट्टी में मिलकर खाक हो जाती हैं। शायद शहर का व्यापार ठप्प होने लगा था या कोई महामारी आई थी और आबादी उजड़ गई थी। या कोई नया शासक आया था और उसके चहेतों ने अपनी तरफ से नए मकान, बाज़ार, मन्दिर बनवाए हों – कुछ दूर हट के...। पुराने लोग जो अब पहले जैसे धनवान न रह गए हों कहीं और जा बसे हों धन्धे-पानी की फिराक में...उनके सूने मकान, बाज़ार ढहते गए हों, उन पर मिट्टी जमा होने लगी हो... सालों साल चली हवाओं, आँधियों, बरसातों, नाले की बहती-बदलती धाराओं और बाढ़ों से बिछती, फैलती और जमा होती मिट्टी।

ऐसी जगहों पर मिट्टी के टीले बनते जाते हैं – पर सीरोन खुर्द में टीले नहीं दिखे। लोगों ने कहा कि खेतों में हल चलाते समय या कुआँ खोदते समय पुराने भवनों के पत्थर निकलते रहते हैं। यानी वे भवन मिट्टी में मिल चुके हैं और उनके ऊपर अब लोग खेती बाड़ी कर रहे हैं।

कमल की नक्काशीवाली भव्य शिला और गोल छतरी के बीच परोसी गई है एक खुशनसीब गाय की चारे की सानी।

कई सारे पुराने अवशेषों के ऊपर झाड़ियाँ उग आई हैं क्योंकि उस जगह का कोई इस्तेमाल नहीं हो रहा।

हम चलने को हुए तो सीरोन खुर्द के कुछ लोगों ने बताया कि माना जाता है कि यहाँ मिट्टी के नीचे बड़ा खज़ाना दबा पड़ा है और इस शिलालेख को पढ़ने से पता चल सकेगा कि उस तक कैसे पहुँचा जा सकता है। हमने "एपीग्राफिका इंडिका" की फोटोकॉपी उन्हें दी और मन-मन हँसते हुए शुभकामनाएँ भी दे डालीं।

कैसा होगा आगे का सफर?

इत्तेफाक से यात्रा के कुछ दिन बाद ही हमें प्रोफेसर चट्टोपाध्याय से मुलाकात का मौका मिला। हमने सारी तस्वीरें उन्हें दे दीं। वे पूछते रहे कि सीरोन खुर्द में कहीं टीला दिखा या नहीं। हम तो कुछ घण्टों के लिए ही वहाँ जा पाए थे और कोई टीला नहीं दिखा था। टीला हो तो पुरातत्व विभाग कभी खुदाई कर सकता है। हालाँकि खुदाई का ज़्यादातर काम प्राचीन काल के स्थानों पर ही होता रहता है। बाद के समय के अवशेषों को खोजना व जानना इतना महत्वपूर्ण नहीं समझा जाता। आखिर इस काम में बहुत पैसा लगता है और बहुत सारे लोगों का समय भी। कभी इसका इन्तज़ाम हो तब सीयडोणि जैसे बनते-बिगड़ते शहरों की कहानी और आगे बढ़ सकेगी।

फिलहाल सीरोन खुर्द के स्कूल को सीयडोणि के पाठ वाली किताब हमें पहुँचानी है। सीयडोणि के सफर का यह दौर तभी पूरा माना जाएगा। गाँव घूमते समय स्कूल के शिक्षक भी हमें मिले थे। हमारे हाथ में किताब होती तो हम उन्हें समझा पाते कि उनका यह गाँव हमारे लिए क्या मतलब रखता है। जब उन्हें यह मिलेगी तो जाने उन्हें यह पाठ कैसा लगेगा!

सती शिलाएँ

सती शिला का आलेख

सतगता गाँव

सीरोन खुर्द के बाद अगला गाँव है सतगता। वहाँ से हम जब सुबह गुज़र रहे थे तो सड़क के किनारे कुछ ऊँची-ऊँची शिलाएँ खड़ी दिखीं। हम रुक गए। ये सती शिलाएँ थीं। हरेक के ऊपरी सिरे में एक औरत का चूड़ियाँ पहने हुए एक हाथ है। जिसके एक तरफ चाँद और दूसरी तरफ सूरज है। इस चित्र के नीचे महिलाएँ पूजा कर रही हैं। सतगता गाँव की महिलाएँ पास के मन्दिर में जल चढ़ाने आई थीं। वे इन सती शिलाओं पर भी फूल चढ़ाती हैं। हमने उनसे कहा कि शिलाओं पर थोड़ा पानी डाल दें क्योंकि उन पर कुछ लिखा हुआ दिख रहा था। एक शिला पर हम ये शब्द पहचान पाए – गणपति, महाराजाधिराज, सुरत्राण (सुल्तान के लिए यह लिखा जाता था), सम्वत 1453। इससे ज़्यादा कुछ समझ नहीं आया। वहाँ आई महिलाओं ने बताया कि उन्होंने सुन रखा है कि किसी समय यहाँ एक पूरी की पूरी बारात के लोगों को मार दिया गया था और उसके बाद बहुत-सी औरतें सती हो गई थीं। कहते हैं कि इसी से गाँव का नाम सतगता रखा गया।

दोस्त
-शशि
दोस्त किसे नहीं चाहिए।
खुशी जताने का सबका अपना तरीका होता है। तुम्हारा क्या है?
दोस्तों को जकड़ के मत रखो।
वक्त आने पर दोस्तों को भी नए दोस्त चाहिए होते हैं। उन्हें इसका मौका दो।
दोस्त हमारे विकास में साझेदार होते हैं।

अजीब सज़ा

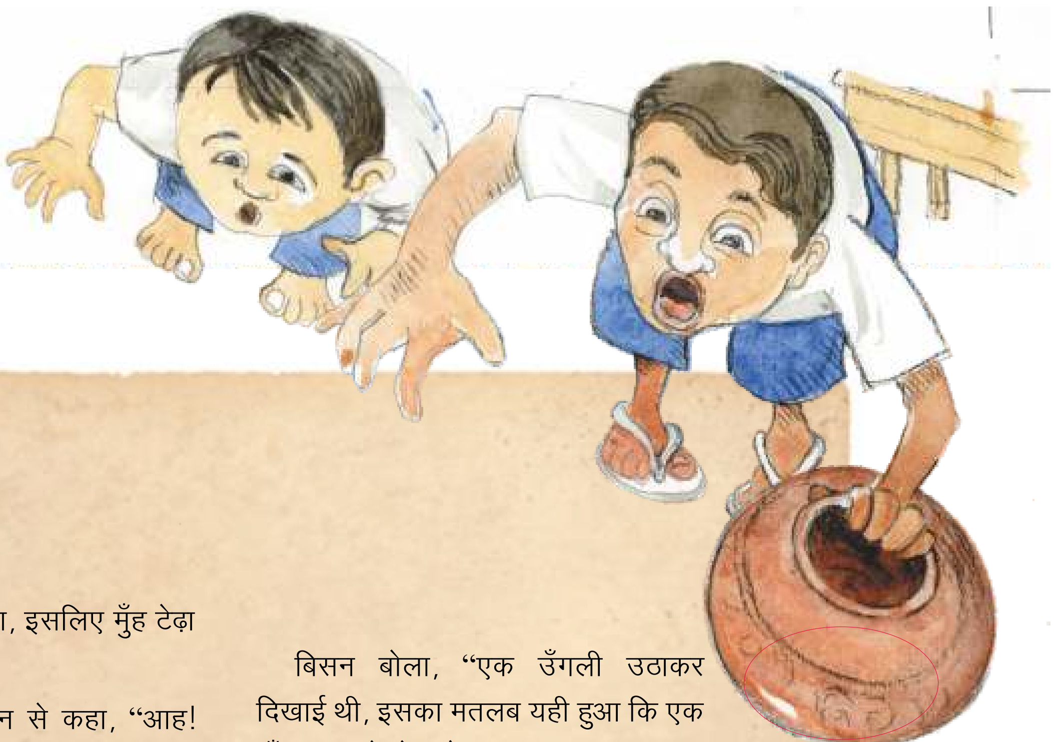

सुकुमार राय

अनुवाद : लाल्टू

“गुरू जी, भोला मुझे चिढ़ा रहा है।”

“नहीं गुरू जी, मैं कान खुजल रहा था, इसलिए मुँह टेढ़ा दिख रहा था!”

गुरू जी ने आँखें बन्द रखे ही सुकून से कहा, “आह! शैतानी से बाज़ नहीं आते! खड़े हो जाओ।”

आधे मिनट तक सब चुपचाप। उसके बाद आवाज़ आई, “खड़ा क्यों नहीं हो रहा रे?”

“मैं क्यों खड़ा होऊँ?”

“तुझे खड़े होने को कहा है।”

“धत्! मुझे कहाँ खड़े होने को कहा है! गणेशवा को पूछें? क्यों रे गणेशवा, उस को खड़े होने को कहा है न?”

गणेश को समझने में देर लगती है। वह धीरे-से उठकर गुरू जी को बुलाने लगा, “गुरू जी! ओ गुरू जी!” गुरू जी ने चिढ़कर कहा, “कहो, क्या कहना है?”

गणेशचन्द्र ने व्याकुल हो पूछा, “किसको खड़े होने को कहा है, गुरू जी?”

गुरू जी ने आँखें तरेरकर ज़ोर-से डाँटकर कहा, “तुझे कहा है। खड़े हो जाओ।” कहकर उन्होंने फिर आँखें मूँद लीं।

गणेशचन्द्र खड़ा रहा। कोई एक मिनट तक बिलकुल शान्ति रही। अचानक भोला ने कहा, “यार उसे एक टाँग पर खड़े होने को कहा था न?”

गणेश ने कहा, “जी नहीं, बस खड़े होने को कहा है।”

बिसन बोला, “एक उँगली उठाकर दिखाई थी, इसका मतलब यही हुआ कि एक टाँग पर खड़े होना है।”

गणेश को मानना पड़ा कि गुरू जी ने डाँटते हुए बीच की एक उँगली उठाई थी। बिसन और भोला ने ज़िद पकड़ ली, “तुरन्त एक टाँग पर खड़े हो, नहीं तो अभी बतला देंगे।”

बेचारा गणेश डर के मारे एक टाँग पर खड़ा हो गया। बस भोला और बिसना में ज़ोर की बहस शुरू हो गई। एक कहे कि दाईं टाँग पर खड़े होना है; दूसरा कहे कि नहीं, पहले बाईं पर। गणेश तो अजीब मुसीबत में पड़ गया! उसने फिर गुरू जी से पूछा, “गुरू जी, किस टाँग पर?”

उस वक्त गुरू जी जाने कैसा सपना देखते हुए बेहोश खर्राटे मार रहे थे। गणेश की पुकार सुन अचानक नींद टूटी तो बौखलाहट में सचमुच बेहोश ही हो गए। बेचारा गणेश सोच भी नहीं सकता था कि उसके सवाल का यह नतीजा होगा। उसने घबराकर कहा, “अरे! अब क्या होगा?”

भोला बोला, “दौड़कर पानी ले आ।”

बिसना बोला, “जल्दी सिर पर पानी डाल।”

गणेश दौड़कर कहीं से मटका ले आया और गुरू जी के गँजे सिर पर पानी डालने लगा। गुरू जी को झट होश आ गया। पर उनकी शक्ल देखकर गणेश के हाथों में पानी का मटका काँपने लगा।

(शेष भाग पेज 38 पर)

चित्रः तापोशी घोषाल

पंजाबी बाल उपन्यास

मगरमच्छ और शेर की लड़ाई...

जसबीर भुल्लर

तराई इलाके में मीलों तक घना और भयानक जंगल फैला हुआ था। यह हज़ारों जीवों का घर था। यहाँ वे अपनी मर्ज़ी से रह सकते थे। आमतौर पर सभी जीवों को यहाँ भोजन मिल जाता था। घास-फूस खानेवाले जीव यहाँ बड़ी संख्या में थे। हालाँकि माँसाहारी जीव भी कम न थे।

जंगल में भोजन और जीवन के लिए संघर्ष लगातार जारी रहता था।

जंगल हर जीव को यह सुविधा भी देता था कि वह दौड़कर चाहे जहाँ छिप जाए और अपनी जान बचा ले।

शेर फिर से रुक गया। उसने हिरणों का झुण्ड देख लिया था। हिरनों के झुण्ड ने नदी की ओर रुख किया हुआ था। उनके पेट भरे हुए थे। नरम-नरम घास चरने के बाद उन्हें प्यास लग आई थी।

हिरणों को सिर पर मँडराते खतरे का कुछ पता न था। वे सहज भाव से घास में मुँह चलाते, तिनके चबाते नदी की ओर चले जा रहे थे।

हवा की दिशा उलटी थी।

शेर कुछ देर आराम से बैठा रहा और फिर पंजों के बल बैठे-बैठे ही आगे बढ़ा। झाड़ी-दर-झाड़ी वह आगे बढ़ता जा रहा था।

हिरनों का अगला झुण्ड नदी तक पहुँच चुका था। उनमें से कुछ पानी पीने लगे थे और कुछ पानी में ही आगे चले जा रहे थे। पीछे रह गए हिरण भी रेतीले तट तक पहुँच चुके थे। शेर और हिरणों के बीच कुछ स्थान ऐसा था जहाँ न तो झाड़ियाँ थीं और न ही सरकण्डे। अब शेर के लिए छिपकर उन तक पहुँचना असम्भव था। शेर ने तुरन्त हमले का फैसला कर लिया।

वह पूरे ज़ोर से उनकी ओर दौड़ा।

हिरणों में अफरा-तफरी मच गई। वे अपने बचाव के लिए किनारे के साथ-साथ पानी में ही भागने लगे। पानी में दौड़ते हुए शेर जल्दी ही भीग गया। भीगने से उसका शरीर और भी भारी हो गया था। उसके भागने के रास्ते में रुकावट आ रही थी। उसके पैरों से पानी में झाग उठ रही थी और चाल धीमी पड़ रही थी। हिरण कुलाँचे भरते हुए हर क्षण उससे अपनी दूरी बढ़ा रहे थे। शेर हारकर रुकने ही वाला था कि उसकी नज़र एक लँगड़े हिरण पर पड़ी। वह झुण्ड से पिछड़ गया था। शेर नए जोश से लँगड़े हिरण की ओर लपका। लँगड़ा हिरण जल्दी ही शेर के हमले में घिर गया। शेर ने कमर की ओर से हमला किया और हिरण को पानी में गिरा दिया। अगले ही पल उसे हिरण की गर्दन में अपने तीखे दाँत गड़ाने थे, लेकिन उससे पहले ही उसने अपने शरीर पर गरम लोहे का वार महसूस किया। उसे लगा कि उसका शरीर जलने लगा था। वह कलाबाज़ी खाकर दूर जा गिरा। सँभलकर फिर उठते हुए उसने देखा, एक भयानक मगरमच्छ उसके शिकार को अपने ताकतवर जबड़ों में पकड़कर गहरे पानी में खीचकर ले जाने की फिराक में था।

गुस्से में शेर ने मगरमच्छ पर वार करने के लिए पैंतरा लिया।

पौ फटने पर किरली मादा मगरमच्छ पानी से निकलकर बाहर किनारे पर आकर लेट गई थी। मग्घू मगर भी उसके पीछे-पीछे वहीं पहुँच गया था। किनारे की रेत अभी ठण्डी थी। सूरज धीरे-धीरे ऊपर उठ रहा था।

उनके शरीर गर्म होने लगे थे। दोनों किनारे पर पड़े देर तक धूप सेंकते रहे। उनके शरीर गर्मी से तपने लगे तो वे फिर से पानी में जा घुसे। कुछ देर बार सर्दी लगने लगी तो वे फिर पानी से बाहर आ गए।

मगरमच्छ कुछ अलग ही जीव होते हैं। बाकी जीवों की तरह न तो उन्हें सर्दी में कँपकँपी होती थी और न ही गर्मी में पसीना आता था। यदि वे काँप सकते तो वे काँप कर अपनी सर्दी को कम कर सकते थे। यदि उन्हें पसीना आ सकता तो वे पसीने से शरीर की तपन कम कर सकते थे। अपने शरीर का तापमान ठीक रखने के लिए उन्हें कभी धूप में जाना पड़ता था और कभी पानी में या छाँव में जाना पड़ता था। यह उनके लिए रोज़मर्रा की बात थी।

किरली और मग्धू आमतौर पर दोपहर में धूप नहीं सेंकते थे। दोपहर में धूप बहुत तीखी होती थी। उस समय दोनों को छाँव में लेटना अच्छा लगता था। रात को वे पानी के अन्दर रहकर ही शरीर की गर्मी को सम्भालते थे। हवा में शरीर जल्दी ठण्डा हो जाता था।

इसके साथ भोजन के लिए उनकी कोशिश भी चलती रहती थी।

शाम हुई तो सूरज पेड़ों के पीछे छिप गया। आसमान अभी भी लाल था। दोनों ने पानी में जाने का मन बना लिया। वे पैरों की मदद से पेट के बल रेंगते हुए पानी में जा घुसे। उनकी मज़बूत और शक्तिशाली पूँछ लहराती हुई तैरने में सहायता करने लगी। नदी के बीच में पहुँचकर उन्होंने शरीर ढीला छोड़ दिया और पानी की लहरों के संग डोलने लगे।

अचानक किरली मगर ने आँखें खोल लीं। हिरणों का एक झुण्ड पानी पीने नदी की ओर आ रहा था। मग्धू भी सचेत हो गया।

वैसे तो जंगल के सब जानवर मगरमच्छों के वहाँ होने के बारे में जानते थे। कुछ जानवरों ने पानी पीने के अपने ठिकाने बदल लिए थे, परन्तु अधिकतर जानवरों की याद्दाश्त कमज़ोर थी। वे खतरे को भूलकर फिर वहीं पानी पीने आ जाते थे।

उनकी इस कोताही के कारण ही मगरमच्छों को अपने भोजन के लिए कोई खास कोशिश नहीं करनी पड़ती थी।

पाट चौड़ा होने के कारण नदी का पानी ज़्यादा गहरा नहीं था। जानवरों की आदत थी कि वे पानी पीते-पीते नदी के अन्दर तक चले जाते थे। उस समय मगरमच्छों के लिए उनका शिकार करना और भी आसान हो जाता था। झुण्ड के अगले हिरण पानी में घुस चुके थे। उन्होंने पानी पीना शुरू कर दिया था। कभी-कभार सिर उठाकर वे दाएँ-बाएँ देख लेते थे। फिर एक-आध पैर आगे बढ़ाकर पानी में मुँह डाल लेते थे।

धीरे-धीरे बाकी हिरण भी नदी तक पहुँच गए थे। किरली और मग्धू हिरणों को देखकर भी साँस रोके पानी में पड़े रहे। उन्हें सही मौके का इन्तज़ार था। पानी पीते-पीते हिरण काफी आगे बढ़ आए तो दोनों ने पानी की नीचे-नीचे ही शिकार तक पहुँचने की सोची। अचानक हिरणों के झुण्ड में घबराहट फैल गई। वे पानी के अन्दर किनारे के साथ-साथ सरपट भागे। एक शेर ने एक मोटे-ताज़े हिरण पर हमला कर उसे पानी में गिरा दिया था।

शेर यदि जंगल का राजा था तो किरली मगरमच्छ भी इस समय पानी की रानी थी। इस तरह उसके सामने से शेर नदी में से शिकार मारकर ले जाए यह किरली की तौहीन थी। वह गुस्से में शेर की ओर बढ़ी। मग्धू मगर भी उसके पीछे-पीछे तैरते हुए आगे बढ़ा। शेर को किरली और मग्धू के वहाँ होने की कोई खबर न थी। हिरण की

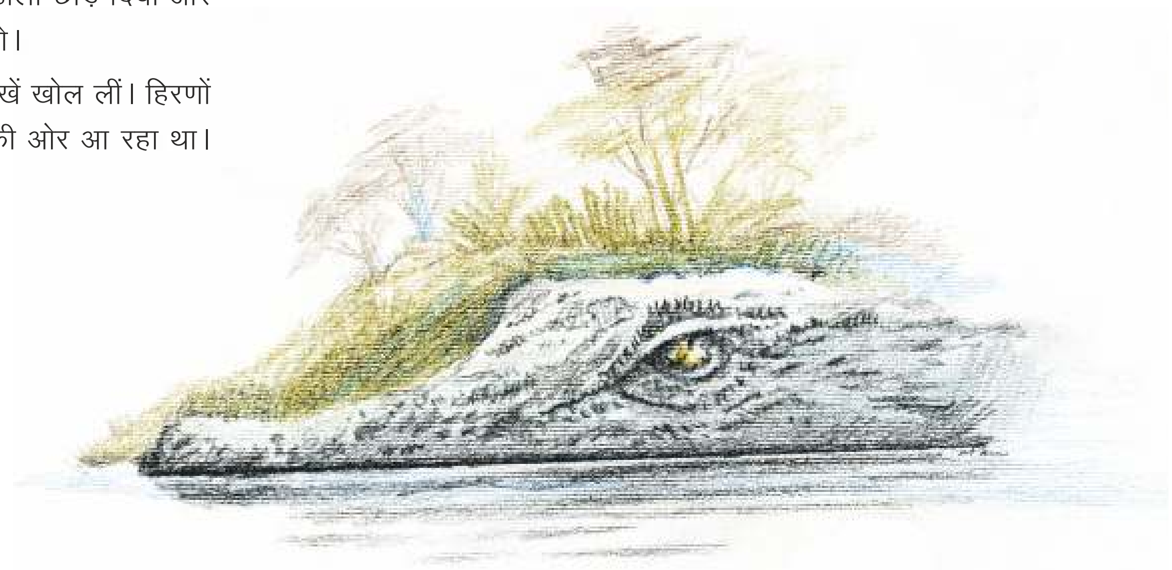

सभी चित्रः अतनु राय

गरदन को अपने तीखे दाँतों से चीरने के लिए उसने मुँह खोला। तब तक किरली चुपके से शेर के पास पहुँच गई थी। उसने पूरी ज़ोर-से पूँछ घुमाकर शेर की पीठ पर दे मारी। शेर कलाबाज़ी खाता हुआ दूर जा गिरा। मादा मगरमच्छ की पूँछ में जैसे नुकीली सुइयाँ लगी हुई थीं। शेर की पीठ दर्द से जलने लगी। उसके मुँह से दबी-सी दहाड़ निकली।

पर शेर हाथ आए शिकार को ऐसे गँवा भी नहीं सकता था। वह सम्भलकर फिर उठा और पैंतरा लेकर किरली की ओर लपका। इस बार किरली की पूँछ उसके मुँह पर पड़ी। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया।

शेर ने अन्दाज़ा लगा लिया था कि उसका दुश्मन ताकतवर ही नहीं खूँखार भी था। ताकतवर जीवों से वह अकसर डर जाता था। उलटे पाँव चलते हुए उसने सिर को झटका। फिर कुछ सम्भलते हुए उसने देखा कि किरली मगरमच्छ अकेली न थी। मग्धू मगर भी वहाँ पहुँच गया था। शेर अकेले उन दोनों से मुकाबला नहीं कर सकता था। उनका पलड़ा भारी था। बुद्धिमानी इसी में थी कि लड़ाई को टाल दिया जाए। शेर फुर्ती से मुड़ा और झाड़ियों की ओर भाग गया।

एक बार फिर भीगे शरीर को झटककर वो ढलान में झाड़ियों की ओट में बैठ गया।

किरली की पूँछ के प्रहार से उसका शरीर दुख रहा था। उसने जीभ से चोट को चाटने की कोशिश की लेकिन उसकी जीभ दर्दवाली जगह तक पहुँच नहीं पा रही थी।

वह निराश हो वहीं बैठा रहा। शिकार करने का उसका सारा जोश ठण्डा पड़ चुका था। उसने लँगड़े हिरण को बड़ी मेहनत से मारा था। पर अब वो किरली मगर के कब्ज़े में था।

हिरणों का झुण्ड कब का आँख से ओझल हो चुका था। किरली मगरमच्छ हिरण को घसीटकर कुछ आगे ले गई। फिर उसे दो-तीन बार उलटाया। हर बार दाँतों से उसकी चमड़ी को चीरने की कोशिश की। मग्धू ने भी अपनी पूरी ताकत लगाई। लेकिन दोनों ही असफल रहे। बूढ़ा होने के कारण हिरण की चमड़ी सख्त और मोटी थी। किरली और मग्धू के दाँत मज़बूत थे, पर इतने भी नहीं कि उसकी मोटी चमड़ी में धँस जाते। यह भी हो सकता था कि इस समय उन दोनों के दाँत झड़ गए हों। मगरमच्छों को कुदरत ने न जाने कैसा बनाया था कि सारी उम्र उनके पुराने दाँत झड़ते रहते थे और नए उगते रहते थे।

शेर की ऐसी कोई समस्या न थी। उसके दाँत तीखे और मज़बूत थे। वह तो हिरण को खाने में बिलकुल भी देर न लगाता, परन्तु हिरण चलकर उसकी ओर आने से तो रहा! किरली और मग्धू को असफल होता देख शेर की उम्मीद बँधी। जब दोनों कुछ देर बाद लौट जाएँगे वह हिरण को खींच लाएगा।

शेर अधखुली आँखों से अपने शिकार पर टकटकी लगाए बैठा रहा। दोनों मगरमच्छ हिरण की मोटी चमड़ी से जूझते रहे और फिर थक हारकर अपने बसेरे की ओर जाने को लौट पड़े। मगरमच्छों को गहरे पानी की ओर जाता देख शेर के कान खड़े हो गए। वह तनकर खड़ा हो गया। और अगले ही पल नदी की ओर दौड़ा और किनारे से पानी में लम्बी छलाँग लगाई... छपाक!

शेर का भारी शरीर पानी में गिरा तो बहुत-सा पानी बाहर की ओर उछला। शोर सुनकर किरली ने पलटकर देखा। वह वहीं से वापिस लौट पड़ी और फुर्ती से शेर की ओर लपकी। मग्धू भी उसके पीछे लपका।

आगे की कहानी मार्च अंक में ...

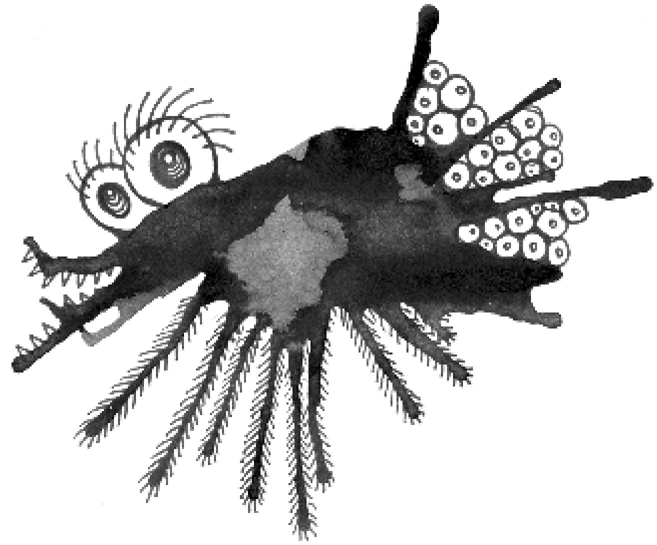

एक बूँद तोड़ी...

फूँक और तुरपाई
विदुषी यादव

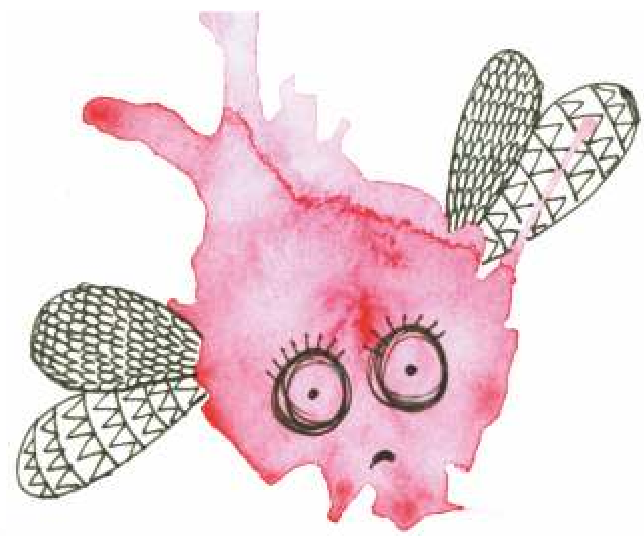

एक बूँद तोड़ी
फूँक मारकर इधर-उधर सरकाई
पानी पर फिर कलम से की तुरपाई
आँख टँकी और पैर टँके तो
क्या-क्या दिया दिखाई...

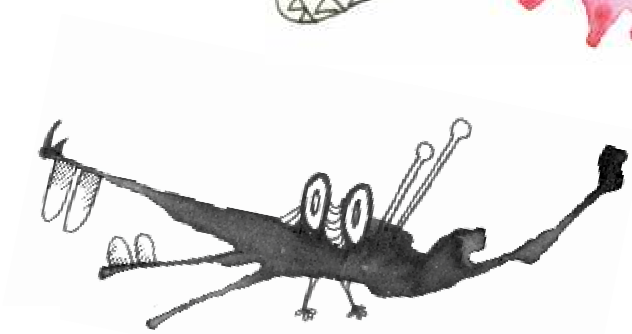

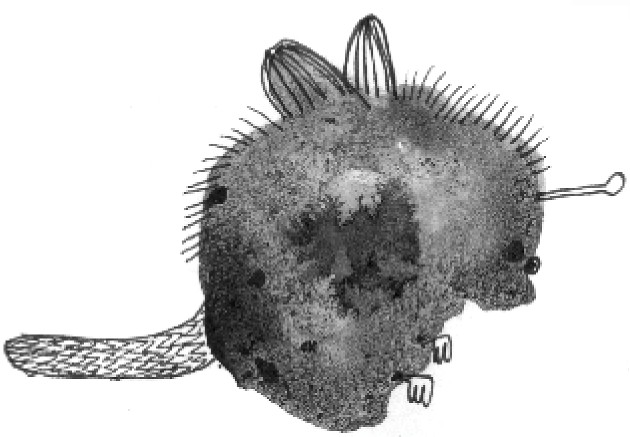

स्याही की एक बूँद को फूँक मारो तो अजब-गज़ब आकृतियाँ बनेंगी। उन्हें आँख, कान, नाक, पूँछ लगाकर जीते-जागते जीव बना सकते हो। ऐसे अनदेखे जीवों का हमें भी इन्तज़ार रहेगा। तुमसे मिले चित्रों में से कुछ हम अगले अंक में प्रकाशित करेंगे। चकमक का पता तो तुम्हें मालूम है ही...

1

2

3

बोलीरंगोली

4

बारह महीने बाद इस घर की
नम्बर प्लेट बदलती है
पता-वता रहता है वही
पर घड़ी दुबारा चलती है
- गुलज़ार

5

1.बीहू, नौ साल, आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल। 2. आफरीन खान,पाँचवीं, अपोस्टोलिक कार्मल हाई स्कूल बान्द्रा (पश्चिम), मुम्बई। 3.पृथ्वीराज एस., आठवीं, डॉ.अम्बेडकर स्कूल धारावी, मुम्बई। 4.फरीहा अज़ीम, पाँचवीं, नई दिल्ली। 5. तेनज़िंग ताशी, चौथी, झाम्ट्से गटसल स्कूल, तवांग, अरुणाचल प्रदेश। 6.गौरी राउत, छठी, प्रोत्साहन पुणे। 7.समयक नायक, नवीं, विद्या ज्ञान स्कूल सीतापुर, उ.प्र। 8.मानी वेंगमो, सातवीं, झाम्ट्से गटसल स्कूल, तवांग, अरुणाचल प्रदेश।

6

7

8

9

10

11

12

9. मनीष, आठ साल, काजल समूह, दिगन्तर, जयपुर, राजस्थान। 10. आरूष राज, बाल भवन किलकारी, पटना। 11. क्रेक चुंग, छठी, झाम्ट्से गटसल स्कूल, तवांग, अरुणाचल प्रदेश। 12. विनय कुमार, ग्यारहवीं, राष्ट्रीय बाल भवन, नई दिल्ली। 13. तेसरिंग गोम्बू, छठी, झाम्ट्से गटसल स्कूल, तवांग, अरुणाचल प्रदेश। 14. रेखा कुमारी, नवीं, बाल भवन किलकारी, पटना। 15. इपशिता, दसवीं, अनुभूति बाल भवन, बैंगलौर। 16. प्रियान्शी धूरिया, नवीं, आनन्द विहार स्कूल, भोपाल। 17. रुद्राक्ष भावरे, छठी, आनन्द विहार स्कूल, भोपाल।

चुनिन्दा सत्रह चित्र

15

13

14

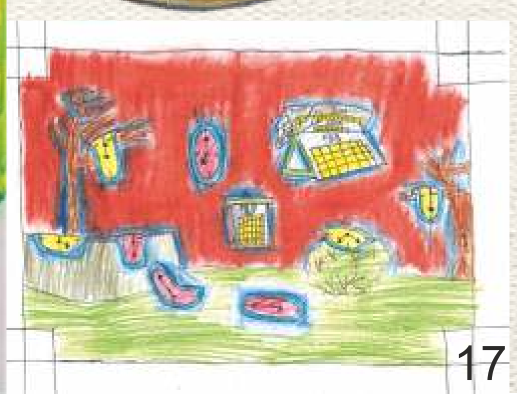

17

16

मेरा पन्ना

सर्दी की धूप

मेरे आँगन में आ जाओ,
प्यारी-प्यारी हलकी-हलकी धूप
हम सब सर्दी में ठिठुर रहे हैं
आँगन के फूल
गर्मी में तो तुम आ जाती हो,
हमारा पसीना बहा जाती हो
आँगन हमारा तप जाता है,
मुरझा जाते फूल-पौधे
सर्दी में तुम कम आती हो,
हमारे आँगन-बगीचे में
हमारे आँगन में आ जाओ,
प्यारी-प्यारी हलकी-हलकी धूप

—आशना कोठारी, छठी,
डीपीएस पुणे, महाराष्ट्र

— वर्षा, पाँचवीं,
रूम टू रीड संस्था, हिमाचल प्रदेश

मीना और उसकी दोस्त

एक बार की बात है। मीना अपनी दोस्त के घर जा रही थी। रास्ते में मीना को एक बिल्ली का बच्चा मिला। उस बच्चे का कोई भी नहीं था। मीना को यह जानकर दुख हुआ। मीना ने इस बच्चे को नाम दिया ज़िनज़ी। उसे उठाया और चल पड़ी। उसको अपनी दोस्त मिली तो दोस्त ने कहा, "तुम बिल्ली उठा लाई। मुझे बिल्लियाँ पसन्द नहीं।" मीना बोली, "तुम्हें नहीं पसन्द पर मुझे पसन्द है और उसे समझाया कि जानवरों का जीना बहुत मुश्किल है। कुछ बचते हैं कुछ नहीं बचते तो हम पालकर रखते हैं।" तो दोस्त ने कहा, "मैं तुम्हारी मदद करूँगी।"

—तान्या, प्रीसिडियम स्कूल, दिल्ली

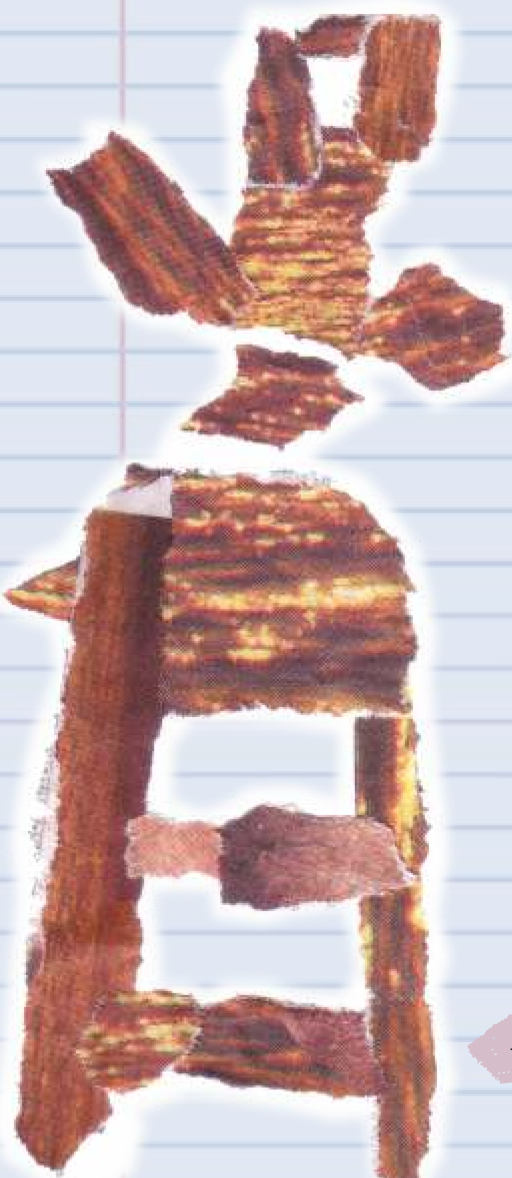

— तन्वी परमार, 6 वर्ष, मन्दसौर, म. प्र.

मेरा पन्ना

मेरे अरमान

— ख़ुशबू साहू,
आठवीं,
शा. क. मा. शाला
पोटियाडीह, म. प्र.

खुला आसमान था मेरा
वो हवाएँ दोस्त थीं मेरी
ना चाहकर भी जाता था मन मेरा
उन लहलहाती नदियों में
क्या झलक थी उन नज़ारों की
उन आसमां के सितारों की
ना चाहकर भी मैं रहती हूँ
इस पिंजरे की बन्दिशों में
अरमान है मेरा
फिर से उड़ सकूँ आसमान में
फिर से मन में उठी एक आशा
फिर से देख सकूँ उन नज़ारों को
और उन आसमां के सितारों को
उन लहलहाती नदियों को
फिर खुला आसमां हो मेरा
फिर वो हवाएँ दोस्त हों मेरी

—अनीशा, नीलम समूह, दिगन्तर, जयपुर, राजस्थान

कौए की चतुराई

एक बार एक कौआ को रोटी मिली। लोमड़ी देख रही थी। लोमड़ी ने सोचा कि कौए से रोटी ले लेती हूँ। लोमड़ी ने कहा, “कौआ भाई, तुम बहुत अच्छा गाते हो। मुझे एक गाना सुनाओ ना!” कौआ ने रोटी को पैर से दबाकर रख दिया और गाना गाया। लोमड़ी वहाँ से चली गई। इसके बाद कौआ ने रोटी खा ली।

—कोकिला देवांगन, चौथी, अज़ीमप्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़

चूहा और चील

एक दिन मैं चबूतरे पर खड़ा था। नीचे ज़मीन पर एक चूहा था। ऊपर चील थी। तो चील नीचे आई और उसने चूहे को पकड़ा। चूहा चिल्लाया। चील उसे ले जाकर बबूल के पेड़ पर बैठकर खाने लगी। चूहा चिल्लाता रहा।

—चेतराम मीणा, दस वर्ष, सवाई माधोपुर, राजस्थान

तीन पहियोंवाला साइकिल रिक्शा तो तुमने देखा ही होगा। शायद कभी सवारी भी की हो! यह प्रयोग उसी से जुड़ा है। ज़रूरत होगी एक अदद साइकिल रिक्शा की और दो मज़बूत साथियों की। सबसे पहले सड़क पर एक रिक्शा तलाशकर प्रयोग करने के लिए उसके चालक की इजाज़त ले लो। फिर अपने साथियों की मदद से रिक्शे के दोनों पिछले पहियों को हवा में उठाकर उसके पैडल घुमाओ। तुम्हारे जो भी अवलोकन व समझ हो, हमें लिख भेजो। इस प्रयोग को ध्यान से करना। रिक्शे को उठाने का ज़िम्मा अपने बड़ों को सौंपना।

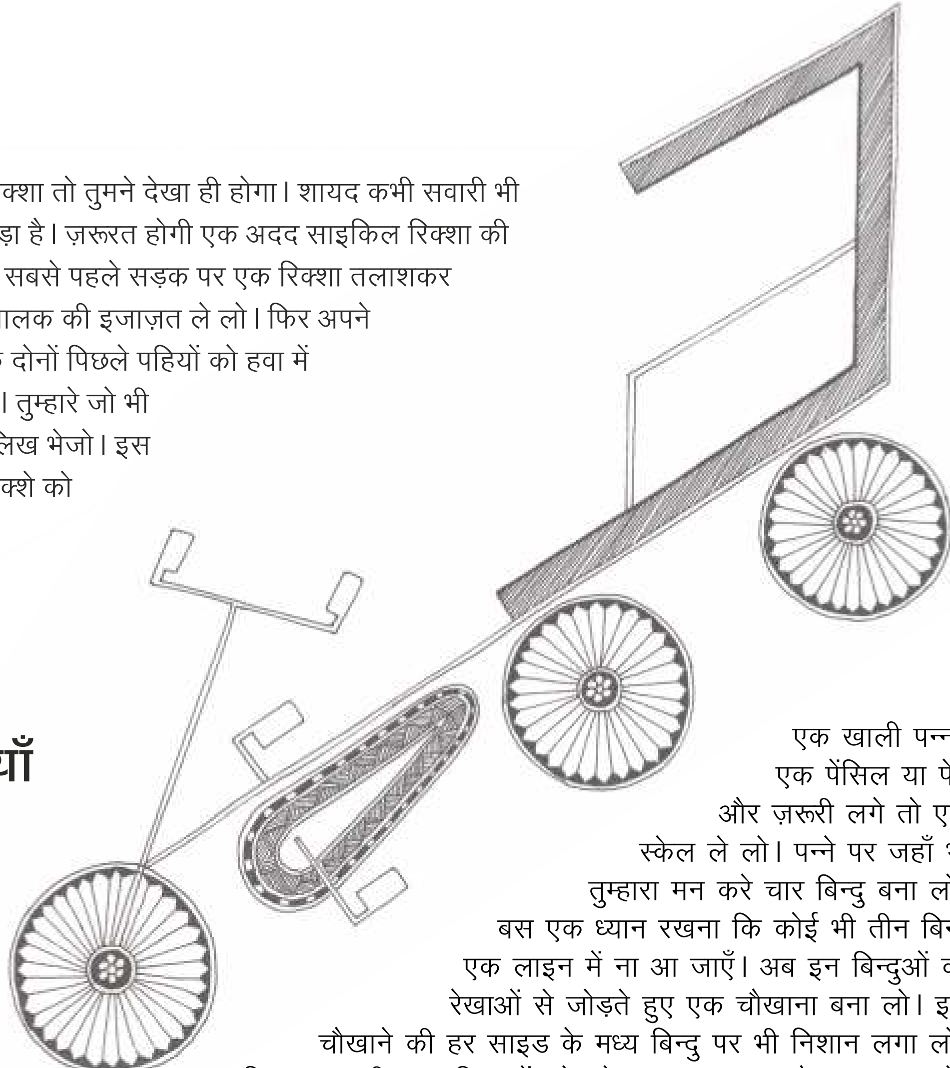

दो गतिविधियाँ

विवेक मेहता

एक खाली पन्ना, एक पेंसिल या पेन और ज़रूरी लगे तो एक स्केल ले लो। पन्ने पर जहाँ भी तुम्हारा मन करे चार बिन्दु बना लो। बस एक ध्यान रखना कि कोई भी तीन बिन्दु एक लाइन में ना आ जाएँ। अब इन बिन्दुओं को रेखाओं से जोड़ते हुए एक चौखाना बना लो। इस चौखाने की हर साइड के मध्य बिन्दु पर भी निशान लगा लो। फिर इन सभी मध्य बिन्दुओं को जोड़कर एक नया चौखाना बना लो। क्या ख्याल है तुम्हारा इस नए चौखाने के बारे में? **अपने अवलोकन हमें चकमक के पते पर भेजना या चाहो तो ई-मेल करना।**

चित्रः राज कुमारी

फॉर्म-4 (नियम-8 देखिए)

मासिक चकमक बाल विज्ञान पत्रिका के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के सम्बन्ध में जानकारी

प्रकाशन का स्थानः भोपाल
प्रकाशन की अवधि : मासिक
प्रकाशक का नाम : अरविन्द सरदाना
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

मुद्रक का नाम : अरविन्द सरदाना
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

सम्पादक का नाम : सुशील शुक्ल
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य
ई-10 शंकर नगर,
बी.डी.ए. कालोनी, शिवाजी नगर
भोपाल 462 016

उन व्यक्तियों के नाम, राष्ट्रीयता और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है : रैक्स डी. रोज़ारियो
: भारतीय
: एकलव्य
ई-10 शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी,
शिवाजी नगर , भोपाल 462 016

मैं अरविन्द सरदाना यह घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

20 जनवरी 2015

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)
अरविन्द सरदाना

लाल गुलाब और हरी पत्तियाँ

रमा चारी

पिछले अंक में हमने प्रकाश के रंग और उनको जोड़ने की चर्चा की थी। इस बार हम उन चीज़ों के रंगों की बात करेंगे जो खुद प्रकाश नहीं देतीं पर प्रकाश में उनको देखा जा सकता है और वे रंगीन दिखती हैं। किसी बगीचे में जाकर लाल गुलाब का पौधा देखो। दिन में यानी सूरज की रोशनी में फूल लाल और पत्तियाँ हरी नज़र आती हैं। ऐसा क्यों? हमें पता है कि सूरज की रोशनी में कई रंग हैं जो जुड़कर सफेद रंग की रोशनी का अहसास कराते हैं। ऐसी कई रंगों की मिल-जुली रोशनी जब गुलाब के पौधे पर पड़ती है तब गुलाब का फूल लाल रंग को छोड़कर बाकी सब रंगों को अपने अन्दर सोख लेता है (वैज्ञानिक भाषा में कहें तो "अवशोषित" कर लेता है)! (चित्र 1) सिर्फ लाल रंग का प्रकाश फूल में अवशोषित नहीं होता और इधर-उधर बिखर जाता है। यही बिखरा हुआ लाल रंग का प्रकाश हमारी आँखों में पहुँचता है और हमें लगता है कि गुलाब का फूल लाल है। इसके उलट पत्तियाँ हरे रंग को छोड़कर बाकी सब रंगों को सोख लेती हैं और बचे हुए हरे रंग को वापस फेंक देती हैं। इसीलिए पत्तियाँ हरी दिखती हैं।

चित्र 1-
लाल गुलाब का फूल बाकी सब रंगों को सोख लेता है, सिर्फ लाल रंग को इधर-उधर बिखरा देता है।

यह तो कुछ-कुछ ऐसा हुआ कि सना की माँ ने उसे छह चॉकलेट दीं। उसने पाँच खा लीं और बची चॉकलेट गगन को दे दीं तो गगन को कितनी चॉकलेट मिलीं? आसान है, 6-5 = 1 यानी एक चॉकलेट। इसी तरह गुलाब के फूल ने भी अपने ऊपर पड़नेवाले रंगों में से कुछ रंग घटाकर बाकी बचे रंग वापस छोड़ दिए। तो क्या हम कह सकते हैं कि गुलाब का फूल (और बाकी रंगीन चीज़ें भी) रंगों को घटाने का काम करता है?

अपने चारों ओर की चीज़ों को देखो और अन्दाज़ा लगाओ कि वे कौन-कौन से रंग सोखती होंगी। उदाहरण के लिए तालिका–1 देखो और ऐसी ही एक तालिका खुद भी बनाओ।

इस तालिका को बनाने में हमने फिर से CIE diagram (चित्र 2) का प्रयोग किया है। इसकी चर्चा हम

क्र.	प्रकाश का स्रोत	वस्तु	वस्तु में अवशोषित होनेवाले रंग	वस्तु का रंग
1.	सूर्य	सेब (लाल)	बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी	लाल
2.	सूर्य	मुर्गी का अण्डा	कोई भी नहीं	सफेद
3.	सूर्य	काजल	बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी, लाल (सभी रंग)	काला
4.	सूर्य	तोता	बैंगनी, नीला, आसमानी, नारंगी, लाल	तोतापरी (हरा + पीला)

*सूर्य के प्रकाश में बैंगनी से लेकर लाल तक सभी रंग होते हैं।

पिछले अंक में “रंगों का जोड़” में कर चुके हैं। जैसे, तोते के पंख हरे और पीले को छोड़कर बाकी रंग सोख लेते हैं। तो हमें तोते का रंग हरे और पीले रंग को जोड़कर मिलनेवाला रंग दिखता है जिसे हम तोतापरी भी कहते हैं। यह जोड़ CIE diagram की मदद से किया जा सकता है।

अभी तक हमने सूर्य के प्रकाश में चीज़ें देखने की बात की। पर हम बहुत-सा काम कृत्रिम प्रकाश में भी करते हैं जैसे, रात को ट्यूबलाइट, बल्ब, मोमबत्ती या दीपक के प्रकाश में काम करना। शायद तुमने ध्यान दिया हो कि चीज़ों के रंग ट्यूबलाइट की रोशनी में थोड़े अलग दिखते हैं। खासकर कपड़े खरीदते समय इसमें बड़ी दिक्कत आती है। दुकान की चमचमाती रोशनी में हम बड़े जतन से जिन कपड़ों का रंग मैच कर के खरीदते हैं उन्हें सिलवाकर जब दिन में पहनते हैं तो पता चलता है कि मैचिंग सही नहीं है। यह इसलिए होता है कि सूर्य और ट्यूबलाइट (या बल्ब) की रोशनी में रंग थोड़े अलग-अलग मात्रा में होते हैं। कपड़े द्वारा अवशोषित रंग घटाने के बाद जो रंग बचते हैं, उनका जोड़ अलग-अलग आता है। इसलिए अलग-अलग रोशनी में रंग अलग-अलग दिखते हैं।

चित्र 2- CIE diagram

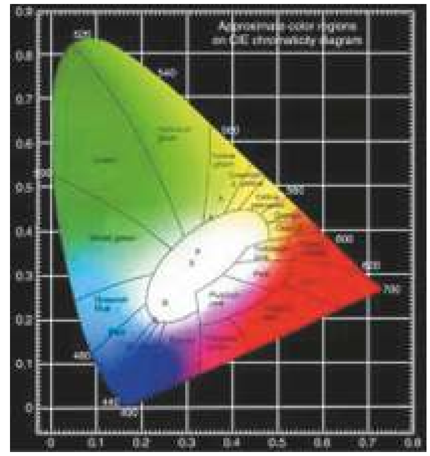

1

किसी मिले-जुले रंग के प्रकाश में कौन-सा रंग कितनी मात्रा में मिला है – यह देखने के लिए हम एक उपकरण का प्रयोग कर सकते हैं। इसे स्पेक्ट्रोस्कोप या स्पेक्ट्रोमीटर कहते हैं। इसके प्रकाश को एक प्रिज़्म से गुज़ारा जाता है जिससे रंग अलग हो जाते हैं। हर रंग की मात्रा एक फोटो डिटेक्टर से नापी जाती है। इस नाप को एक ग्राफ के ज़रिए दिखाया जाता है। सूर्य की रोशनी में बैंगनी से लेकर लाल तक अनगिनत रंगतें (शेड्स) होती हैं। जब यह रोशनी लाल गुलाब पर पड़ने के बाद हमारी आँखों में पहुँचती है तो उसमें कौन-से रंग होते हैं इसका एक ग्राफ चित्र में दिखाया गया है (चित्र 3)। साफ दिख रहा है कि बाकी रंग (नीले, हरे वगैरह) तो बहुत ही कम हो गए क्योंकि सबको गुलाब ने सोख लिया। सिर्फ लाल रंग के कई शेड्स बच गए। इसीलिए गुलाब हमें लाल दिखता है। कभी फुरसत में यह भी सोचना कि कोई चीज़ इतना सारा प्रकाश अवशोषित कर लेती है तो प्रकाश की ऊर्जा का क्या होता है?

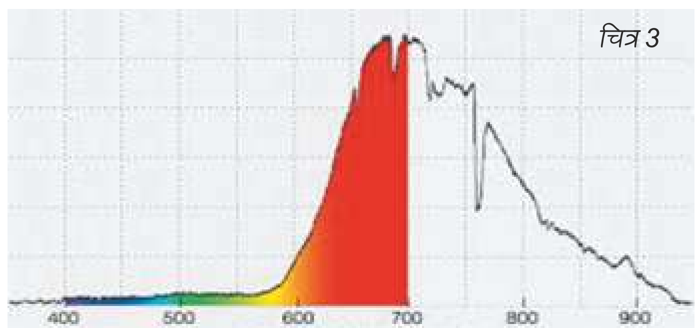

चित्र 3

इसको समझने के लिए हम वापस गुलाब के फूल के पास चलते हैं। सूर्य के प्रकाश में गुलाब लाल दिख रहा था। पर अगर हम उसे नीले रंग के प्रकाश में (कमरे या बगीचे में लगे नीले रंग के बल्ब में) देखें तो क्या होगा? (चित्र 4) लाल गुलाब नीले रंग के प्रकाश को तो पूरा सोख लेता है तो क्या बचा? कुछ नहीं। यानी गुलाब के फूल पर पड़नेवाले प्रकाश का कोई हिस्सा वापस हमारी आँख में नहीं जाता। ऐसी दशा में हमें (सूर्य के प्रकाश में लाल दिखनेवाला) गुलाब का फूल काला दिखाई देगा (देखें बॉक्स 1)। इस तरह के अवलोकन पर तुम एक प्रोजेक्ट भी बना सकते हो। अलग-अलग रंगों की खूब सारी चीज़ें इकट्ठी कर लो। जैसे छोटे खिलौने, गेंद, कपड़ों के टुकड़े, मसाले, कलर बॉक्स वगैरह। फिर इनको अलग-अलग रंगों की रोशनी में देखो और नोट करो कि हर

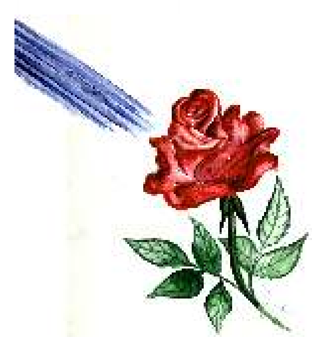

चित्र 4 - नीले रंग का प्रकाश लाल रंग के फूल पर पड़ता है और उसमें पूरा अवशोषित हो जाता है।

रोशनी में वे किस रंग की दिखती हैं। फिर इस अवलोकन से अन्दाज़ा लगाओ कि हर वस्तु किन-किन रंगों को सोखती या अवशोषित (घटाती) करती होगी (देखें बॉक्स 2)।

अब तक हमने समझा कि प्रकाश के रंगों को कैसे जोड़ा जाता है और रंगीन चीज़ें रंगों को कैसे घटाती हैं। चित्र 5 में दोनों तरह का हिसाब दिखाया गया है। बाईं तरफ का चित्र दिखाता है कि लाल, हरे और नीले प्रकाश (RGB - Red Green Blue) को मिलाकर सफेद दिखनेवाला प्रकाश बनाया जा सकता है। और दाईं तरफ दिखाया गया है कि रंगीन पेंट (कलर) को मिलाने पर क्या होता है। यहाँ फिरोज़ी, रानी और पीले रंग (CMY - Cyan Magenta Yellow) को बराबर मात्रा में मिलने पर काले रंग का पेंट मिलता है। यानी ये तीनों रंग बराबर मात्रा में मिलाने पर लाल, हरे, नीले सभी रंगों को सोख लेते हैं और हमें वह चीज़

(शेष भाग पेज 38 पर)

चित्र 5-
रंगों को जोड़ते हुए और घटाते हुए मिलाना।

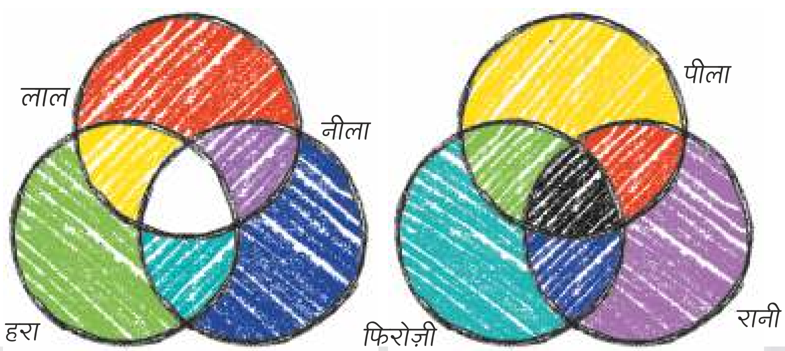

2

हमने लाल गुलाब को सूर्य की रोशनी और नीले बल्ब की रोशनी में देखने की बात की। शायद तुम्हारे मन में सवाल उठ रहा हो कि लाल गुलाब भी अलग-अलग शेड्स में मिलते हैं, तो क्या सभी शेड के लाल गुलाब नीली रोशनी में काले दिखेंगे? अगर हम हरी या पीली रोशनी में देखें तो क्या होगा?

पहले सवाल को लेते हैं। लाल गुलाबों के अलग-अलग शेड्स का मतलब है कि वे सूर्य के सफेद प्रकाश में से अलग-अलग रंगों को बिखरा रहे हैं। अगर हम CIE Diagram (चित्र 2) को देखें तो पता लगता है कि लाल रंग में थोड़ा नीला, हरा या पीला मिला हो तो भी वह वस्तु हमें लाल ही (कुछ अलग शेड) दिखेगी। यानी हो सकता है कि कोई लाल गुलाब का फूल सूर्य की रोशनी से हरा, पीला, नारंगी, आसमानी, बैंगनी को तो पूरा सोख ले पर नीले रंग को पूरी तरह न सोखे। तब उससे टकराकर बिखरनेवाले प्रकाश में लाल रंग काफी मात्रा में और नीला रंग थोड़ी मात्रा में होगा। ऐसे फूल को जब हम नीली रोशनी में देखेंगे तो वह काला नहीं बल्कि गहरा नीला दिखाई देगा। इसलिए हो सकता है कि कोई गुलाब सूर्य की रोशनी में लाल और पीली रोशनी में पीला दिखाई दे क्योंकि उसका दिखाई देनेवाला लाल रंग असल में लाल और पीले से मिलकर बना है। अगर तुम्हारे पास अलग-अलग रंग के बल्ब हों तो रंगीन चीज़ों को अलग-अलग रोशनी में देखो और CIE Diagram का उपयोग कर के यह अन्दाज़ लगाने की कोशिश करो कि वह चीज़ किस-किस रंग के प्रकाश को सोखती है।

यहाँ यह बात भी ध्यान में रखने की है नीले बल्ब से सिर्फ नीला प्रकाश ही निकलता हो यह ज़रूरी नहीं है। दो रंग के प्रकाश जुड़कर भी हमको किसी तीसरे रंग के प्रकाश का अनुभव करा सकते हैं।

3

काला रंग

हम कई बार कहते हैं कि फलां चीज़ का रंग काला है। पर वास्तव में काला मतलब प्रकाश का न होना है। अब सवाल यह है कि किसी चीज़ से टकराकर कुछ भी प्रकाश वापस नहीं आता तो वह चीज़ हमें दिखती कैसे है! इसका उत्तर यह है कि काली चीज़ें हमें दूसरे रंगों के बैकग्राउण्ड के कारण दिखती हैं। जैसे, यह कागज़ सफेद है यानी सभी रंग के प्रकाश को वापस फेंक रहा है। इस कागज़ पर जहाँ-जहाँ काली स्याही से लिखा या छापा गया है वहाँ पर सारा प्रकाश सोख लिया जाता है। तो हमारी आँखों को एक डिज़ाइन दिखता है जिसमें कुछ बिन्दुओं से प्रकाश आ रहा है, कुछ से नहीं। इस भेद (डिज़ाइन) को पहचान कर ही हम पढ़ पाते हैं। सफेद कागज़ पर सफेद पेंसिल से लिखें तो शायद ही पढ़ पाएँ। इस तरह से सोचें तो समझ सकते हैं कि कोई रंगीन चीज़ अलग-अलग रोशनी में काली कैसे दिख सकती है।

गज्जू का बाड़ा और मणिवाला साँप

अनिल सिंह

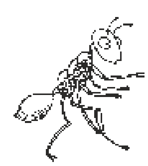

बाड़े का खुलना हमारे लिए किसी तिलस्मी किले के खुलने से कम न था।

गज्जू का बाड़ा। कोई 100 x 40 फुट लम्बा-चौड़ा और 10 फीट ऊँची चारदीवारी से घिरा। एक तरफ टीन की छप्परवाले दो हॉल थे। जिनके बड़े-बड़े लकड़ी के दरवाज़ों पर पीतल के वज़नी ताले लटकते थे। लोहे की छड़ोंवाली चार खिड़कियाँ भी थीं जिनके पल्ले भीतर से बन्द रहते थे।

इन दो हॉलों के अलावा बाकी का बाड़ा ऊपर से खुला था। नीम का एक बड़ा-सा और पुराना पेड़, तीन-चार सागौन, सात-आठ अमरूद, कुछ कनेर, बेल, आम, पीपल, एक शीशम और हाँ दो आँवले के भी पेड़ थे वहाँ। नीम के पेड़ में लालमुँह के बन्दरों का बसेरा था जो अमरूद और पीपल तक विचरते रहते थे। गज्जू का ये बाड़ा दरअसल सेठ गजानन्द अग्रवाल का अस्थाई गोदाम था। इसमें वे उमरिया के शहपुरा निगहरी के जंगलों से इकट्ठा की गई और खरीदी गई जड़ी-बूटियाँ और दूसरे वनोपज – हर्रा, बहेड़ा, महुआ, चिरायता, माहुल के पत्ते आदि जमा करते थे।

उमरिया के दूरदराज के गाँवों से गोंड, बैगा, कोल आदिवासी जान जोखिम में डालकर घने जंगलों से वनोपज लाते। सेठ गजानन्द को औने-पौने दामों में बेचते और कोदों, कुटकी और नमक खरीदते हुए शाम को अपने गाँव लौट जाते। इतवार को बाड़ा खुलता। चिरायता के बड़े-बड़े गट्ठर ट्रकों में भरे जाते और ट्रक उन्हें लेकर न जाने कहाँ चले जाते! शायद डाबर या वैद्यनाथ कम्पनी की फैक्टरियों में जाते होंगे जहाँ से दवाइयाँ बनकर बाज़ार में आती हैं।

बाड़े का खुलना हमारे लिए किसी तिलस्मी किले के खुलने से कम न था। चौकीदार हर समय डटा रहता और हम झाँक-झाँककर भीतर की एक झलक पाने की कोशिश करते।

हम तब 11-12 साल के थे। और नीम के नीचे गिल्ली, गदागद या लतगेंद खेलते हुए बड़ी सावधानी बरतते कि गेंद या गिल्ली कहीं बाड़े के भीतर न चली जाए। अब तक बाड़े ने हमारी सैकड़ों गेंदें, गिल्लियाँ और बैडमिण्टन की फुद्दियाँ लील ली थीं। घुसकर निकालने का साहस न था किसी में। एक तो अनदेखी वीरान जगह, ऊपर से बड़ी-बड़ी घासफूस और लंजार, बन्दरों का डेरा, साँप-बिच्छुओं का खतरा और कुछ सुनी-अनसुनी कहानियों का मिला-जुला खौफ। घुसे कौन!

गर्मियों के दिन थे। दुपहरियाँ हमारी इसी नीम के तले कटतीं। एक रोज़ शिल्लू के घर के सामनेवाले हिस्से में बाड़े के कोने की तरफ, जहाँ लगातार पेशाब करते रहने से ईंटें गल चुकी थीं, किसी को एक छेद नज़र आ गया। फिर तो डण्डा डालकर उस छेद में से अन्दर झाँकने का जुगाड़ बन ही गया। यह किसी बाइस्कोप से कम रोमांचक न था। सब बारी-बारी से दोनों हथेलियों का घेरा बनाकर भीतर झाँकते। किसी भयानक घने जंगल से कम न था गज्जू का बाड़ा।

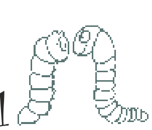

गज्जू का बाड़ा सदा चर्चा में रहता। घर के लोगों की तरफ से भी उसके भीतर जाने की सख्त मनाही थी। गर्मियों की रातों में वहीं स्ट्रीट लाईट के नीचे बैठकर हम देर तक गप्प-सड़ाके लगाते। कभी-कभी राशिद मियां कैरम ले आते और बड़े भाई साहब जैसे दूसरे बड़ी उम्र के लड़कों के साथ जमकर बाजी खेलते। हम दर्शक होते और पार्टियों में बँट जाते। हर गोटी के पिकने पर या गप्पा जाने पर खूब मज़े लेते।

एक रात अन्नू जब गज्जू के बाड़े के उस कोने की तरफ पेशाब करने गया तो उसने उत्सुकतावश छेद से भीतर झाँक लिया। वहाँ जो दिखा... उसकी तो पेशाब आधी ही रह गई। वो भागता हुआ हमारे पास आया। हम सब उसके साथ गए और सबने बारी-बारी से भीतर झाँका। वहाँ पर हम बच्चों की झोंप-सी लग गई थी। हममें से जाने किस ने कहा "मणि"। किसी ने जोड़ा मणिवाला साँप। फिर क्या था...मणिवाले साँप का किस्सा देखते-देखते पूरे मोहल्ले में फैल गया।

रोज़ रात में छेद के पास झोंप लगी रहती। तरह-तरह की बातें चल पड़ीं। किसी ने बताया कि एक हज़ार साल की उम्र हो जाने पर साँप के सिर पर मणि आ जाती है। कोई कालिया नाग का अवतार बताता तो कोई कहता कि यह सात फनोंवाला होता है। बीचवाले फन के मस्तक पर मणि चिपकी रहती है। वह बहुत कीमती होती है। सोने और हीरे से भी लाख गुना कीमती। उससे सब इच्छाएँ पूरी होती हैं। जहाँ भी रहती है रुपयों-पैसों की भरमार हो जाती है। किसी ने तो यह तक कह डाला कि नाग की मणि को लोहे से छुआओ तो वह सोना बन जाता है। यह भी कि मरने से पहले साँप किसी पात्र व्यक्ति को मणि दे जाता है। और यदि कोई सपेरा ज़बर्दस्ती मणि निकाल ले तो साँप तड़प-तड़पकर मर जाता है। साल दो-साल ये बातें चलती रहीं। गज्जू के बाड़े में मणिवाले साँप के होने की खबर अब पक्की हो चुकी थी।

दिन में कुछ न दिखता। अँधेरा होते ही मणि चमकने लगती। और वह भी एक खास जगह पर। पीपल के नीचे फूटी ईंटों का एक ढेर था। इतने दिनों तक लगातार देखने से वह जगह अब समझ में आने लगी थी। दिन में हम उस जगह को अन्दाज़ से समझने की कोशिश करते। पर निराशा हाथ लगती। दिन में वहाँ मणिवाला साँप तो क्या कोई गिरगिट भी सरकते न दिखता!

दिन गुज़रते गए। दीवार अब कई जगह से टूटने लगी थी। या यूँ कहें कि तोड़ डाली गई थी। बाड़े के अन्दर कूदना-फाँदना शुरू हो गया था। पर अन्दर जाना एक हद तक ही होता। मणिवाले साँप का कोई सुराग हाथ न लगा था अब तक। पर इसके रहस्य पर से परदा उठाना अब अपनी ज़िम्मेदारी समझ में आती थी।

एक रोज़ शिल्लू, अन्नू, मुन्नू, पप्पू, बनिया गुड्डू, भग्गू – हम सब नीम के नीचे इकट्ठे हुए। तय हुआ कि चमकनेवाली इस चीज़ का पता लगाना ही पड़ेगा। हो सकता है साँप मणि छोड़कर कहीं और चला गया हो। या वहीं मर गया हो और मणि चमक रही है। या फिर कुछ और!

चित्रः तापोशी घोषाल

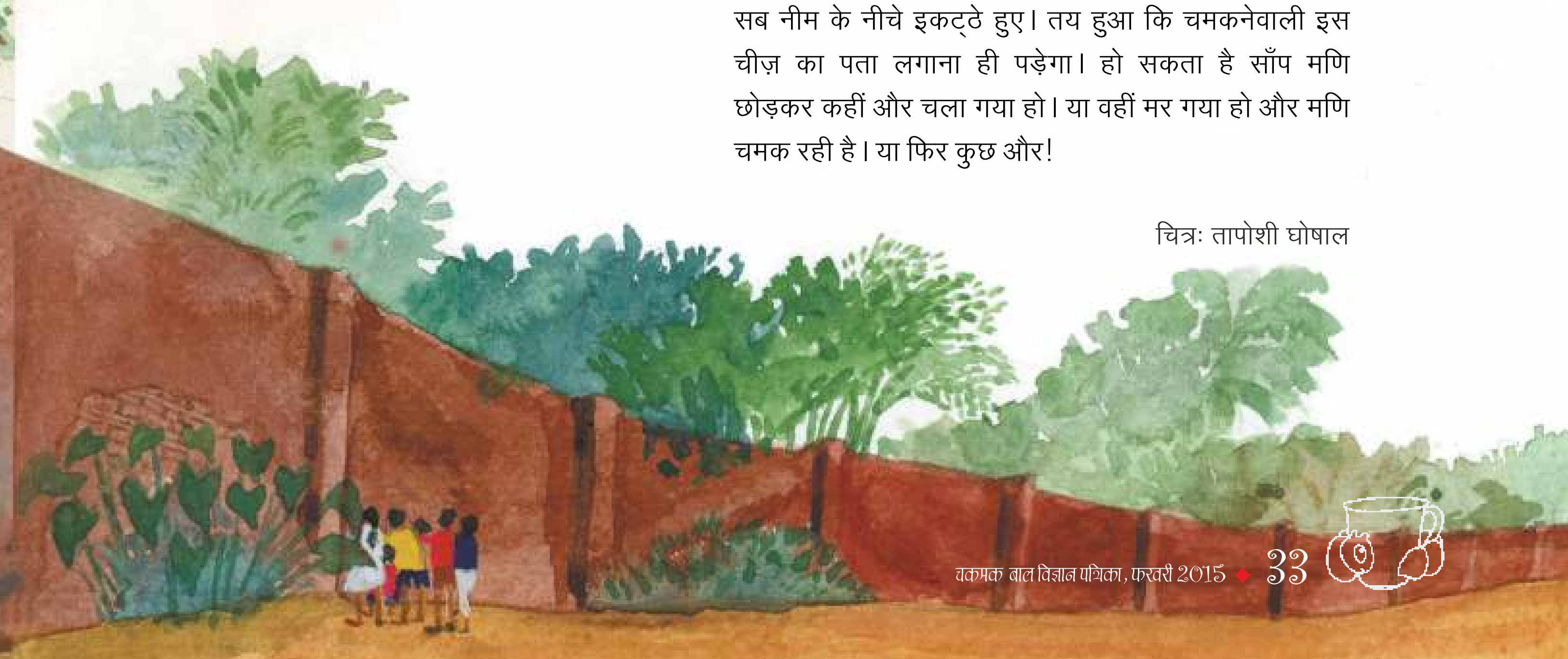

चौकीदार ताला लगा रहा था।
उसने ऊँची आवाज़ में कहा,
"अगर कोई घुसा तो इसी नीम पर उलटा टाँग दूँगा।"

प्लान के मुताबिक दिन ढलने से पहले गुड्डू अपने घर से लालटेन ले आया। हम सब दीवार के आसपास खड़े हो गए थे। सड़क से निकलते लोग हमें इस तरह झुण्ड लगाए बाड़े के पास खड़े देखकर पूछते क्या हुआ। कभी हम गेंद अन्दर चली जाने का तो कभी नीम की पत्तियाँ तोड़ने का बहाना बना देते। मौका देखकर पप्पू ने दीवार फाँद ली। अभी उजाला था। जैसे ही सड़क सूनी हुई हम सब छेद से देखते हुए पप्पू को गाइड करने लगे। मणि चमकनेवाली जगह का अन्दाज़ा करके ईंटों के उस ढेर के पास लालटेन रख दी गई। पप्पू कूद-फाँदकर वापस आ गया। उसने बताया कि वहाँ उसे तीन-चार बिल भी दिखे थे। आईडिया यह था कि रात होने पर छेद से मणि को देखा जाएगा और लालटेन से उसकी दिशा और दूरी का हिसाब लगाकर दिन में कुछ पड़ताल की जाएगी।

अँधेरा होते ही एक बार फिर हम सब छेद के पास झोंप लगाकर खड़े हो गए। दीवार और भी कई जगह से टूट-फूट गई थी और उसमें छेद भी हो गए थे पर मणि इसी एक छेद से चमकती हुई दिखती थी। हमने देखा, लालटेन की टिमटिमाती रोशनी में मणि की चमक आज कुछ फीकी थी। पर एक टूटे हुए घड़े के मुँहाने का घेरा उस धुँधली रोशनी में साफ दिख रहा था जिसके बीचोंबीच मणि चमक रही थी। अब मणि की पक्की लोकेशन मिल चुकी थी। यह हमारे लिए बड़ी भारी उपलब्धि थी।

दिन निकलते ही पप्पू, गुड्डू, शिल्लू और मैं गज्जू के बाड़े की तरफ भागे। पहुँचे तो देखकर हैरानी हुई कि बाड़े का दरवाज़ा खुला था। पर आज तो इतवार नहीं था। और इतनी सुबह तो कभी नहीं खुलता था। तरह-तरह की आशंकाएँ मन को घेरने लगीं। इतने में चौकीदार बाहर निकला। बड़ी-बड़ी मूँछोंवाला साँवला-सा ऊँचा-पूरा हरियाणवी लठैत था वो। हम थोड़ा ठिठके। हमें लगा दीवार फाँदने की और लालटेन रखने की खबर शायद लग गई है इसे। तभी यह सुबह-सुबह आ गया है। हमें देखकर चौकीदार थोड़ा गरजा, "यहाँ क्या कर रहे हो? कौन लोग घुसे थे कल?" एक बार को तो धक रह गए हम सब। लगा हमारे घुसने की पक्की खबर है उसे। पप्पू ने जवाब दिया, "हमें नहीं मालूम। हम तो बस खेलते हैं यहाँ पर। बड़े लड़के लोग चढ़े होंगे।" धीरे-धीरे हम सब तितर-बितर हो गए। डर था कहीं लालटेन न पकड़ी जाए। आग लगने के जोखिम को देखते हुए मामला था भी गम्भीर। थोड़ी देर बाद हमने देखा कि चौकीदार ताला लगा रहा था। उसने ऊँची आवाज़ में कहा, "अगर कोई घुसा तो इसी नीम पर उलटा टाँग दूँगा।" उसे गज्जू के बाड़े की सुरक्षा की पड़ी थी और यहाँ बेशकीमती मणि का मामला फँसा हुआ था।

चौकीदार नदीवाले रास्ते की तरफ बढ़ा। मुसलमान टोले तक हम उसे जाते हुए देखते रहे। कुछ ही देर में चौकीदार टीला उतर गया। पर हम सतर्क थे कि कहीं छिपकर हम पर नज़र तो नहीं रखे है। जब घूम-फिरकर देखभाल लिया और तसल्ली कर ली तो वापस बाड़े के पास पहुँच गए। और मौका देखकर दीवार फाँदी और अन्दर चले गए। लालटेन उठाई और रात में धुँधले दिखे, टूटे घड़े के मुँहाने को देखा। कुछ न दिखा। सबकी निगाहें मणि को तलाश रही थीं। मणि कम से कम कँचे बराबर तो होगी ही। पप्पू के बताए कुछ बिल वहीं आसपास थे। ज़रूर ये साँप के बिल थे। साँप का डर भी था कि कहीं मणि की रक्षा में वो हम पर हमला न कर दे। मरा हुआ साँप भी न दिखा। हाँ, एक केंचुली ज़रूर दिखी पर वह भी काफी पुरानी। लालटेन के इर्द-गिर्द कोई 10 मीटर के दायरे में हमने चप्पा-चप्पा छान मारा। निराश से हम टूटे घड़े के मुँहाने पर ही ज़ोर-शोर से तलाशने लगें। वहाँ दारू की एक खाली बोतल के अलावा कुछ न दिखा। हम देर तक लकड़ी से वहीं कुरेदते रहे कि कहीं ईंटों के बीच न फँसी हो मणि। हम बहादुर शिकारियों की तरह यहाँ-वहाँ की खाक छानते रहे और फिर लालटेन लेकर बाहर आ गए। आते-आते शिल्लू पलटकर देर तक उस पूरी जगह को गौर से देखता रहा और फिर कुछ-कुछ हताशा में उसने दारू की उस बोतल को उठाया और दूर फेंक दिया।

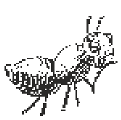

प्लान के मुताबिक दिन ढलने से पहले गुड्डू अपने घर से लालटेन ले आया। हम सब दीवार के आसपास खड़े हो गए थे।

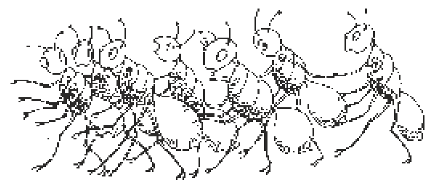

अब आदतें इस आसानी से तो जाती नहीं। इतने सालों से लगभग रोज़ हम सब बाड़े के बाहर इकट्ठा होते थे। तो इस रोज़ भी रात को इकट्ठे हुए। और रोज़ की तरह हथेलियों का घेरा बनाकर झाँका तो... ये तो कमाल था! वहाँ घुप्प अँधेरे में सिर्फ पीछे के किसी घर से आ रही रोशनी की एक पतली रेखा नज़र आ रही थी। दूर-दूर तक कहीं किसी मणि की चमक न थी। हम देर तक सोचने की कवायद में भिड़े रहे। कई फॉर्मूले लगाए। तर्क पर तर्क लादे। क्या कोई हमसे पहले वहाँ पहुँचकर मणि उठा ले गया? कुछ न सूझ रहा था न बूझ रहा था।

अचानक शिल्लू चीखा...अरे...समझ गया...समझ गया... सब समझ गया। और ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगा। हम सबने अपना सोचना बीच में छोड़ उसे घेर लिया। और फिर जो उसने बोला वो कुछ इस तरह था –

दरअसल कोद्दू के दद्दा की कोठरी बाड़े के दूसरे किनारे से सटी हुई थी। वहाँ छप्पर की झिरी में से बल्ब की रोशनी की एक किरण कुछ इस तरह उस काँच की शीशी पर पड़ती होगी कि वो रिफलेक्ट करके कोनेवाले छेद से नज़र आती होगी। अब शीशी वहाँ नहीं है सो "मणि" भी नहीं चमक रही।

सुनते ही सबको साँप सूँघ गया (शायद मणिवाला साँप!)। सभी को इस खुलासे में दम लगा। सभी एक-दूसरे को देखने लगे – मुँह बाए। और फिर सभी ज़ोर-से हँस दिए। सारा रोमांच फुस्स हो गया था।

गज्जू का बाड़ा अब हमारे लिए कोई रहस्य न रहा था। झट-से कोई भी दीवार कूदकर गेंद ले आता। लबेर पकने पर पेड़ पर चढ़कर गिराते। कोई कहता तो गेहूँ की कोठी में रखने के लिए नीम की पत्तियाँ तोड़ लाते। गर्मी की दुपहरियों में उसके भीतर जाकर आम और अमरूद तोड़ लाते। मणिवाले साँप के किस्से अब थम गए थे। पर उस साँप को भूल हम आज तक नहीं पाए हैं। इसीलिए तो आज जब कागज़ लेकर बैठा तो...

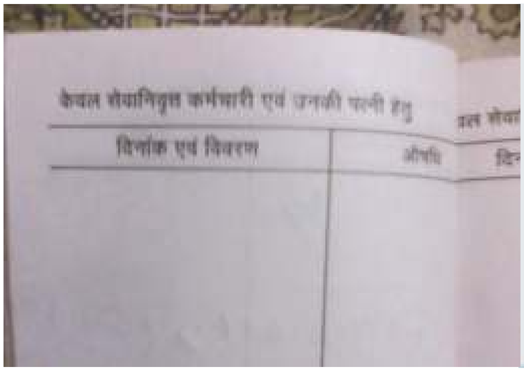

पिछले अंक में हमने ये दो चित्र दिए थे और इनके बारे में तुम्हारी राय जाननी चाही थी...

दो तस्वीरों की दास्तां

विवेक मेहता

तुम्हारे जवाब मिले। इस बार की गतिविधि पिछली बार की तरह एकदम सीधी-सपाट नहीं थी। इसका अन्दाज़ा तुम्हारे जवाबों को पढ़कर भी लग गया। वैसे मज़ा तो इस बार भी आया जवाब पढ़कर। पर जिस बात की तरफ तुम्हारा ध्यान दिलवाना चाह रहा था वहाँ अधिकतर का ध्यान गया ही नहीं। खैर, ऐसा भी होता है। खासतौर पर तब जब मुद्दा इतना जटिल हो। पर उम्मीद है तुम ने इसे लेकर आपस में बातचीत ज़रूर की होगी और अगर नहीं की तो आगे पढ़ने के बाद ज़रूर करोगे।

आओ समझने की कोशिश करते हैं कि असल मुद्दा है क्या!

पहली तस्वीर में एक अस्पताल की हेल्पडेस्क दिखलाई गई है जिस पर लिखा है – "क्या मैं आपकी मदद कर सकती हूँ?" वहीं दूसरी तस्वीर में एक रिटायर्ड कर्मचारी की अस्पताल की सेवा पुस्तिका है जिस पर लिखा है – "केवल सेवानिवृत्त कर्मचारी व उनकी पत्नी हेतु।" ये तस्वीरें साझा करते हुए मेरे दिमाग में यह ख्याल था कि शायद तुम इन्हें देखकर कुछ ऐसे सवाल करो –

– हेल्पडेस्क में यह क्यूँ नहीं लिखा कि "क्या मैं आपकी मदद कर सकता हूँ" या "क्या मैं आपकी मदद कर सकता/सकती हूँ?" या "केवल सेवानिवृत्त कर्मचारी व उनके पति हेतु" या "केवल सेवानिवृत्त कर्मचारी व उनके जीवनसाथी हेतु"?

क्या हेल्पडेस्क केवल एक महिला ही सम्भाल सकती है और क्या एक सेवानिवृत्त कर्मचारी एक महिला नहीं हो सकती?

1. मुझे लगता है कि इन चित्रों में समाज में हो रहे लिंग भेद को दर्शाया गया है। समाज में कुछ काम निश्चित कर दिए गए हैं जैसे, बाहरवाले काम, नौकरी, मेहनतवाले, भागदौड़ वाले काम पुरुष करते हैं और घरेलू काम साफ-सफाई, खाना बनाना, बच्चों की देखभाल महिलाएँ करती हैं। मेरे घर में पापा भी घरेलू कामों में सहयोग करते हैं जैसे कपड़े धोना, झाड़ू लगाना, आँगन लीपना। और कभी-कभार खाना भी बना देते हैं। और आजकल महिलाएँ तो हर क्षेत्र में जैसे अन्तरिक्ष, विज्ञान, चिकित्सा, उद्योग, राजनीति, अभिनय... के शिखर पर हैं।

मैंने अपनी कक्षा की सहेलियों से कहा कि वो भी इस पर विचार करें और कुछ लिखें। लेकिन उन्होंने मना कर दिया और कहा तुम भी इन सब चीज़ों पर क्यों ध्यान दे रही हो। पढ़ाई में मन लगाओ। पर मुझे लगता है कि लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। सबको मिलकर इस पर विचार करते हुए घर पर लड़कों और लड़कियों को समान अधिकार देना चाहिए।

– संस्कृति दीक्षित, आठवीं, तथागत ज्ञानस्थली इंटर कॉलेज, अतर्रा, ज़िला बान्दा, उत्तरप्रदेश

क्या एक हेल्पडेस्क केवल एक महिला ही सम्भाल सकती है और क्या एक सेवानिवृत्त कर्मचारी एक महिला नहीं हो सकती?

तुम्हारे भेजे जवाबों में से कुछेक में ऐसे सवाल उठाए भी हैं। ऐसे कई और भी सवाल हो सकते हैं। ये सवाल पिछली गुब्बारेवाली गतिविधि में उठे सवालों से कहीं ज़्यादा पेचीदा हैं और हमारे सामाजिक सम्बन्धों की ओर इशारा करते हैं। वो सामाजिक सम्बन्ध जिनके चलते हमारे समाज में महिलाओं व पुरुषों के बीच भेद है, खासतौर पर काम से जुड़ा भेद। एक बात और जो इस मुद्दे को पिछली गतिविधि से अलग बनाती है वो यह है कि गुब्बारेवाला प्रयोग किसी भी तरह के समाज में किया जाए नतीजे एक से ही होंगे। पर सामाजिक सम्बन्धों से उपजे ये भेद अलग-अलग समाजों में अलग-अलग हो सकते हैं क्योंकि इनके पीछे कोई कुदरती नियम नहीं बल्कि इंसानों के बनाए नियम काम करते हैं।

एक किस्सा सुनाकर अपनी बात खत्म करूँगा। यह किस्सा मुझे मेरी माँ ने सुनाया था। हमारे घर में कुछ मेहमान आए हुए थे। उनके दो बच्चे थे – एक लड़की और एक लड़का। लड़का उम्र में लड़की से छोटा था। जब मेरी माँ चाय बनाने के लिए उठने लगीं तो लड़के ने चिल्लाकर अपनी बहन से कहा, “जाओ तुम चाय बनाकर सबको पिलाओ। शर्म नहीं आती ताई चाय बना रही हैं।”

जब तुम ऊपर सुझाए सवालों और किस्से पर सोच रहे हो तो इस पर भी सोचना कि क्यों कपड़े धोने के पाउडर या साबुन के इश्तेहारों में महिलाएँ ही होती हैं? या क्यों हमारे देश का सबसे बड़ा संवैधानिक पद “राष्ट्रपति” का है?

इस बार के सवाल देखो पेज 27 पर...

2. सर्विस बुक एक ऐसी पुस्तक है जिसमें हर सरकारी कर्मचारी का रिकॉर्ड रखा जाता है। इसमें नौकरी में आने की तारीख, उसकी योग्यता, उसका पद व वेतन होता है। इसमें उसकी छुट्टियों का भी रिकॉर्ड होता है। इस पुस्तक में केवल सेवानिवृत्त कर्मचारी व उसकी पत्नी हेतु लिखने से पता चलता है कि यह केवल पुरुषों के लिए है। महिलाओं के लिए नहीं। महिलाओं के लिए दूसरी पुस्तिका होनी चाहिए। इस वाक्य से पुरुष प्रधानता का पता चलता है। ये भेद-भाव क्यों?

– विश्वास स्कूल, गुड़गाँव के इन बच्चों ने इसी आशय के पत्र लिखे – आशीष माहिल, आठवीं, मनीष, छठी, राजू, सातवीं, संजय, आठवीं, चन्द्रशेखर, छठी, सुलेखा, सातवीं, मोजीबुर रेहमान, आठवीं, शेरॉन माहिल, आठवीं, मनीष प्रसाद, आठवीं।

3. इस चित्र में कोई महिला कह रही है कि क्या मैं आपकी मदद कर सकती हूँ? मेरे ख्याल से “हाँ” क्योंकि कोई महिला कमज़ोर नहीं होती है। उसे समाज में कमज़ोर कर दिया जाता है। लगता है यहाँ का समाज जागरूक होगा क्योंकि ऐसे समाज में ही कोई महिला को इस तरह से अपने मन की बात कहने की आज़ादी होती है। जिस तरह से बात कही गई है, ऐसा लगता है कि वह औरत अपने दम पर खड़ी होकर अपनी सहायता तो कर ही रही है दूसरों की सहायता भी करना चाह रही है।

– आदित्य भगत, नवीं, परिवर्तन, पटना, बिहार

4. हमारे घर के सदस्य अस्पताल में भरती थे तो सहायता केन्द्र ने कहा कि क्या मैं आपकी सहायता कर सकती हूँ। हमने कहा कि ज़रूर करो हमारी सहायता। हमने पूछी कि बताओ कि आभा नाम की लड़की कहाँ भरती है। सहायता केन्द्र ने बताया कि आभा 9 नम्बर कमरे में भरती है।

– रोशनी, पाँचवीं, शासकीय प्रथमिक शाला धरसीवा, रायपुर, छत्तीसगढ़ (यहाँ के शाहिन, निखत बानो, रोशनी, राहुल देवगन, निखिल विनय सिंह, रोहित पाटनवार, सौम्या निर्मलकर, नाज़िया बानो, और गोपाल ने भी इसी आशय के पत्र लिखे)

लाल गुलाब और हरी पत्तियाँ

(पेज 27 का शेष भाग)

काली दिखाई पड़ती है। अपने कलर बॉक्स के रंगों को मिलाकर देखो कि क्या यह चित्र सही है? चित्रकारों का तो यह रोज़ का काम है। यही फार्मूला मशीनी चित्रकारी यानी प्रिंटिंग में उपयोग होता है।

पिछले अंक वाले लेख में हमने देखा था कि रंगीन टी.वी. में तीन रंग के प्रकाश से करीब-करीब सारे रंग बना लिए जाते हैं। उसी तरह रंगीन छपाई (जैसे कि चकमक के रंगीन चित्र) के लिए चार रंग की स्याही से सारे रंग बना लिए जाते हैं। ये रंग हैं, फिरोज़ी, रानी, पीला और काला (प्रिंटिंग की भाषा में इसे CMYK कहते हैं)। वैसे तो हम पहले तीन रंगों को मिलाकर भी काला रंग बना सकते हैं पर क्योंकि ज़्यादातर छपाई सफेद रंग के बैकग्राउण्ड पर होती है तो काले रंग का बहुत उपयोग होता है। ऐसे में काली स्याही अलग से रखना सस्ता पड़ता है। अब वैज्ञानिक हों या चित्रकार अर्थशास्त्र तो सबको देखना ही पड़ता है!

तो अगली बार कपड़ों का रंग चुनना हो या घर की दीवारों का रंग, ज़रूर ध्यान रखना कि उसे किस रोशनी में देखा जाए तो बेहतर होगा!

ईश्वर की कहानियाँ

एक भक्त ने पूछा, "भगवान आप अपनी पूजा पृथ्वी पर करवाते हैं और रहते स्वर्ग में हैं। यह विरोधाभास क्यों?"
"इसलिए कि बच्चे, घर की मुर्गी दाल बराबर हुआ करती है।"

ईश्वर को 2500 साल पुराना बोधी वृक्ष दिखाया गया।
उस वृक्ष को देखकर ईश्वर बोले, "यह वृक्ष तो मुझसे भी ज़्यादा पुराना है।"

– विष्णु नागर

अजीब सज़ा

(पेज 19 का शेष भाग)

डर के मारे सभी गम्भीर थे। बेचारे श्यामलाल की शक्ल ही खिलखिलाती मुस्कराती-सी है, बस वह गम्भीर नहीं हो पाया। गुरू जी का गुस्सा अचानक उसी से जा टकराया। शेर-से गुर्राते हुए वे बोले, "इधर आ!"

डरते हुए रुआँसी आवाज़ में श्यामलाल बोला, "मैंने क्या किया? गणेशवा ने पानी डाला, मेरी क्या गलती?"

गुरू जी भले बन्दे थे। उन्होंने श्यामलाल को छोड़कर गणेश की ओर ताका तो देखा कि उसके हाथों में अभी भी पानी का मटका था। सवाल पूछे जाने से पहले ही गणेश बोल उठा, "भोला ने कहा था।"

भोला बोला, "मैंने तो बस पानी लाने को कहा था। बिसना ने कहा था, सर पर डाल।"

बिसना बोला, "मैंने गुरू जी के सर पर डालने को थोड़े ही कहा था? उसे अपने सर पर डालना था, ताकि उसका दिमाग ठण्डा हो पाता।"

गुरू जी थोड़ी देर सब की ओर तर्राती आँखों से देखते रहे, फिर बोले, "जाओ! तुम लोग बच्चे हो इसलिए छोड़े दे रहा हूँ। खबरदार फिर कभी ऐसा किया तो!" सब ने चैन की साँस ली। पर गुरू जी अचानक क्यों नरम हो गए, किसी की समझ में नहीं आया। गुरू जी को अचानक अपने बचपन की कोई शरारत याद आ गई थी, यह तो सिर्फ वही जानते थे।

जनवरी की चित्र पहेली हल

	अ	म	रू	द		बा	दा	म
ढा	बा			रा	व	ण		च्छ
	बी	का	ने	र			ढो	र
घो	ल		व		मू	स	ल	
ड़ा		गि	ला	स		र		च
	लो	टा		रौ		ग		प्प
फु	हा	र		ता	ज	म	ह	ल
ल			अं		हा		ज्जा	
की	ल		क	मी	ज़		म	क्का

प्रवासी पक्षियों की यात्राएँ

पक्षियों का अनोखा संसार - 9

लेख व फोटोः जितेन्द्र भाटिया

हरमिरसर झील पर हवासिलों का एक झुण्ड

लम्बी दूरी तक प्रवास करनेवाले पक्षियों के कुछ हैरतअंगेज़ किस्से तुमने पिछले अंकों में पढ़े होंगे। इस बार इन यात्राओं से जुड़ी कुछ दिल छू लेनेवाली कहानियाँ...

गुजरात के कच्छ क्षेत्र का एक प्रमुख शहर है भुज। इसके बीच में स्थित है 450 साल पुरानी हरमिरसर झील। सर्दियाँ आते-आते यह झील दूर-दूर से आए प्रवासी पक्षियों से भर जाती है। कई तरह की बत्तखें, कुरारियाँ, छोटे गुदेरे और इन सब के साथ बड़े-बड़े हवासिल (great white pelican) शान से झील के एक छोर से दूसरे छोर तक फुर्सत में धीरे-धीरे तैरते हैं। सर्दियाँ खत्म होने तक ये सारे पक्षी एक-एक कर सुदूर मंगोलिया या काला सागर (ब्लैक सी) या साइबेरिया लौट जाते हैं। अपनी कच्छ यात्रा के दौरान मैंने कई बार देखा कि झील के बीचोंबीच तैर रहे हवासिलों के बड़े-से झुण्ड से अलग तीन हवासिल किनारे के पास तैर रहे हैं। ध्यान से देखने पर पता चला कि उनमें से एक हवासिल चोटिल है। यह भी देखा कि किसी अजनबी के पास आते ही ये झट किनारे से दूर चले जाते हैं लेकिन वहीं किनारे पर कपड़े धो रही महिलाओं से ये ज़रा भी नहीं डरते। हमारे पूछे जाने पर एक महिला ने बताया कि तीन साल पहले एक कुत्ते ने पानी में घुसकर इस हवासिल का पंख तोड़ डाला था। जब मार्च में इनके वापस लौटने का वक्त आया तो घायल हवासिल ने पंख फड़फड़ाए। पर वह उड़ नहीं पाया। वह उड़ नहीं सकता था अब। सारे हवासिल एक-एक कर उड़ गए। लेकिन दो हवासिल अपने घायल मित्र के साथ यहीं रुक गए। और तब से ये तीनों यहीं के होकर रह गए हैं। अब तो ये हमें पहचानने भी लगे हैं। अपनी जन्मस्थली छोड़ चुके ये तीनों दोस्त आज भी आपको साथ-साथ तैरते मिल जाएँगे।

घायल हवासिल और उसके साथी

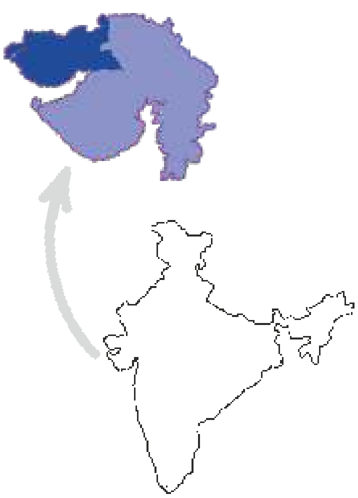

सामान्य
देसी नीलकण्ठ

यूरोप से अफ्रीका जानेवाला
विलायती नीलकण्ठ

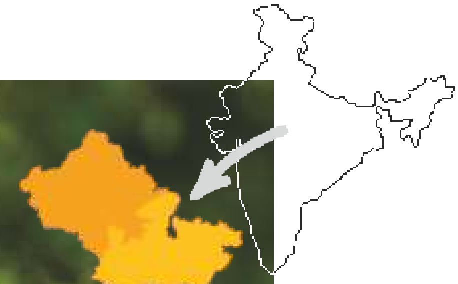

मध्य भारत में आमतौर पर दिखाई देनेवाला एक पक्षी है नीलकण्ठ (Indian roller)। इस नीलकण्ठ का एक विदेशी भाई भी है – विलायती नीलकण्ठ। यह सर्दियों से पहले अपने घर पूर्वी यूरोप और मध्य एशिया से दक्षिणी अफ्रीका का सफर भारत से गुज़रते हुए पूरा करता है। अगस्त से सितम्बर तक राजस्थान और पश्चिमी मध्य प्रदेश में दिखने के बाद यह आगे अफ्रीका चला जाता है। और मार्च में हमारे देश से होता हुआ यह वापस अपने घर यूरोप लौट जाता है। किसी जगह पर ठहरने की बजाय वहाँ से सिर्फ गुज़रनेवाले इन पक्षियों को हम राहगीर प्रवासी या passage migrants कहते हैं।

ऐसा ही एक और राहगीर प्रवासी पक्षी है बाज़ प्रजाति का अमूर श्यान या शाहीन (amur falcon)। हज़ारों-लाखों के इनके झुण्ड हर साल सर्दियों से पहले अपनी जन्मस्थली साइबेरिया से उड़कर कुछ ही सप्ताहों में दक्षिणी अफ्रीका पहुँच जाते हैं। और सर्दियाँ खत्म होते ही वापस उसी रास्ते से लौट आते हैं। यानी हर साल 22 हज़ार किलोमीटर की लम्बी यात्रा! अभी कुछ साल पहले ही सेटेलाइट की मदद से हमें इनकी इस अनोखी यात्रा के हवाई मार्ग का पता चला है। इनकी यह यात्रा इन्हें भारत के ऊपर से ले जाती है।

यात्रा के बाद नागालैण्ड में
विश्राम करता अमूर का एक झुण्ड

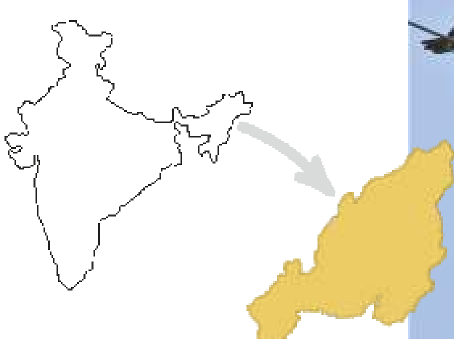

अमूर शाहीन को पकड़ना आसान होता था।

कुछ समय पहले तक इस पक्षी की इस लम्बी यात्रा का सबसे मारक हिस्सा था नागालैण्ड प्रदेश। एक अनुमान के मुताबिक हर साल लगभग 120 हज़ार से भी ज़्यादा अमूर शाहीन को उनके माँस के लिए मार दिया जाता था। चूँकि अमूर अपनी यात्रा बहुत कम ऊँचाई पर और जगह-जगह रुकते हुए पूरा करते हैं इसलिए इन्हें पकड़ना आसान होता था। अमूर की व्यापक हत्याओं का यह सिलसिला कई सालों से चल रहा था। एक समय तो लगा कि इस धरती से इस सुन्दर पक्षी का नामोनिशान ही मिट जाएगा। तब बहुत सारी संस्थाओं के साथ नागालैण्ड की सरकार और चर्च ने मिलकर अमूर शाहीन को बचाने के लिए एक बड़ा अभियान शुरू किया जो अब भी चल रहा है। बच्चों और फिर उनके ज़रिए उनके परिवारवालों को भी इसे बचाने के बारे में जागरूक किया गया। चर्च ने भी इस अभियान के समर्थन में अपनी हिस्सेदारी की। इन तमाम कोशिशों का ही नतीजा है कि पिछले साल अमूर शाहीन के नागालैण्ड से गुज़रने के महीनों (सितम्बर से नवम्बर) के दौरान इसका शिकार न के बराबर हुआ।

अमूर शाहीनों की निर्मम हत्या

नागालैण्ड के मुख्य मंत्री "अमूर बचाओ अभियान" के बच्चों के साथ

"अमूर बचाओ अभियान" की सफलता दर्शाता पोस्टर!

(नागालैण्ड के चित्रों के लिए कंज़रवेशन इंडिया और रामकी श्रीनिवासन का आभार)

चित्र पहेली

► बाएँ से दाएँ ▼ ऊपर से नीचे

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / 261 / भोपाल / 2015-17

पैनें दाँतोंवाली

- नागार्जुन

धूप में पसरकर लेटी है
मोटी-तगड़ी, अधेड़, मादा सुअर...

जमुना किनारे
मखमली दूबों पर
पूस की गुनगुनी धूप में
पसरकर लेटी है
यह भी तो मादरे-हिन्द की बेटी है।

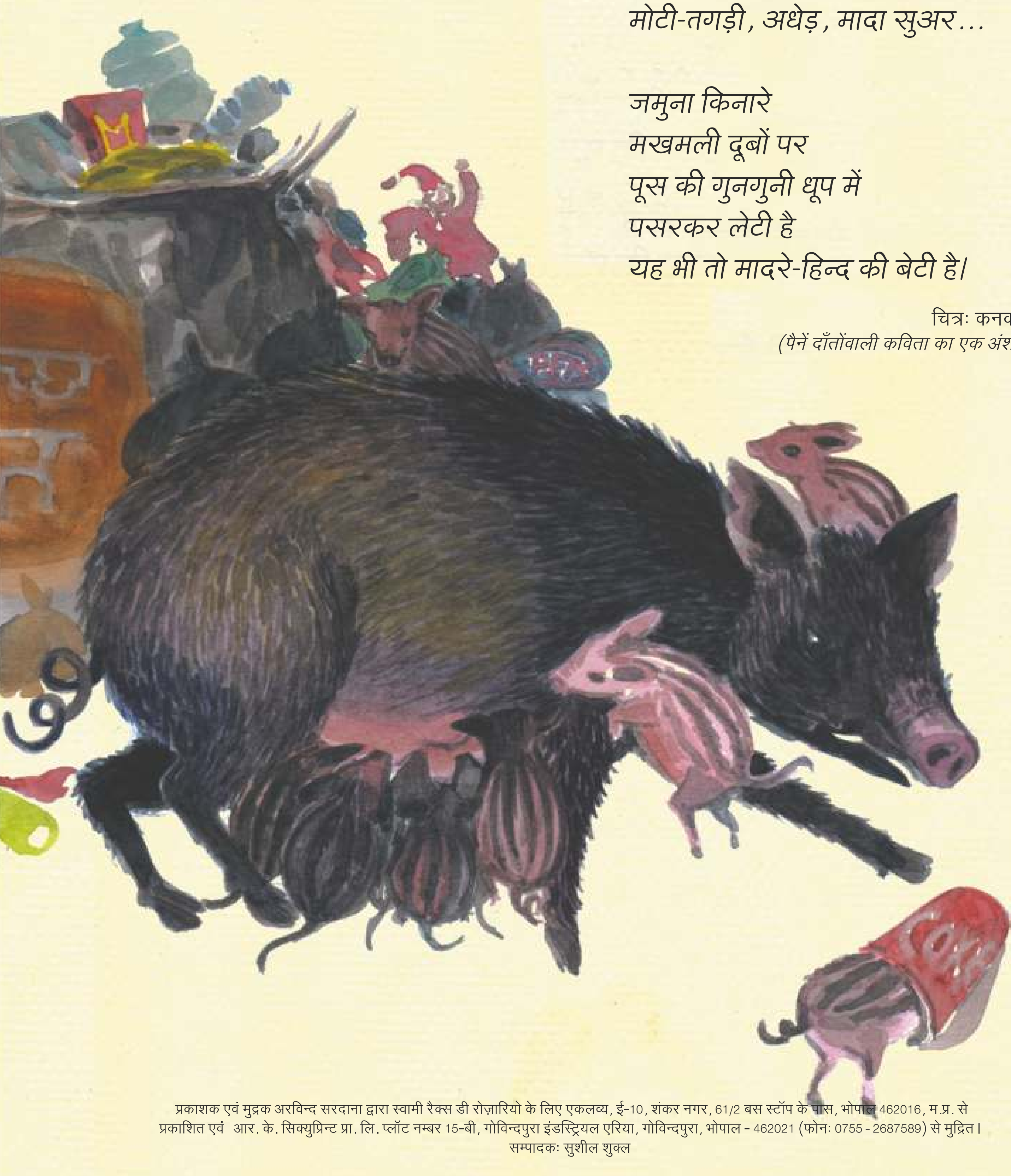

चित्रः कनक

(पैनें दाँतोंवाली कविता का एक अंश)

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोनः 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल